



THE JAIMINIYA OR TALAVAKARA  
UPANISHAD BRAHMANA.

DEVANAGARI TEXT WITH INDEXES.

PREPARED FROM THE EDITION, IN ROMAN SCRIPT

OF

SHRI HANNS OERTEL PH. D.

BY

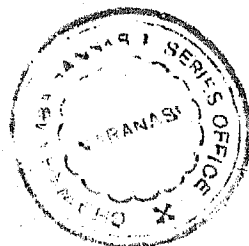
PANDIT RAMA DEVA, B. A.

WITH

AN INTRODUCTION ON THE HISTORY OF SAMAVEDA LITERATURE.

BY

BHAGAVAD DATTA.



FEBRUARY 1921.

FIRST EDITION,

1,000 Copies.

Price 6/11

8/11

ओ३म

# दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला

अनेक विद्वानों की सहायता से ।

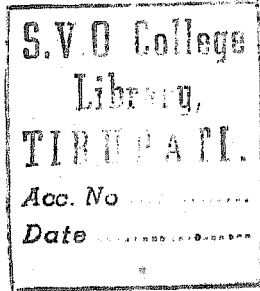
भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित ।

ग्रन्थाङ्क ३ ।



श्रीमहयानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ३

ओ३म्  
जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

पं० रामदेव बी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस अर्टेल, पी० एच० डी०

महाशयस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्याम् लिपिकृतम् ।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक दयानन्दकालेज, लाहौर,

लिखितं

भूमिका-सहितम् ।

आख्यं सम्बत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ ।

सन् १९२१ ई० ।

दयानन्दबाब्द ३८ ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति

मूल्य ६/४०

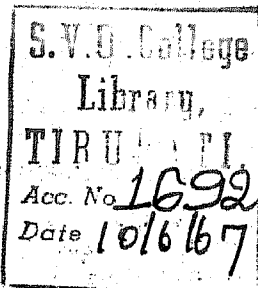
पं० भैरवप्रसाद के प्रबन्धसे विद्याप्रकाश प्रेस चङ्गड़महला लाहौर में छपा ।

Printed by Bhairo Prasada,  
MANAGER. VIDYA PRAKASHA PRESS. LAHORE.

AND PUBLISHED BY  
THE RESEARCH DEPARTMENT. D. A. V. COLLEGE. LAHORE

The Publications of this series can also be had of—

1. MESSRS. LUZAC & Co.,  
46 Great Russell Street,  
*London W. C.*
2. Lala Moti Lal Banarsi Dass, The Punjab  
Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.
3. Lala Mehr Chand Lachhman Dss, Sanskrit  
Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.
4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot, Moha  
Lal Road, Lahore.



# भूमिका ।

## सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

### परमात्मा से सावेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ऋ० १०।६०।६।। यजुः ३१।७।। तै० ब्रा० ३।१२।४॥

उस व्यापक सर्वपूज्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं। अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋचः' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचापं, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋचः, सामानि,' और 'छन्दांसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है। यदि तुम्हारी बात मानी जावे तो 'यजुः' पद से तुम क्या अभिप्राय लोगे ?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहां जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहां न घटेगी क्योंकि 'छन्दांसि' पद पर पूर्ण विचार किसी और परिणाम पर वे जाता है। देखो ! 'छन्दांसि' पद यहां किन्हीं मन्त्र-विशेषों का बोधक नहीं है। दधान्द सरस्वती

ने इसी पर विचार करते हुए लिखा है—'वेदानां गायत्र्यादिच्छन्दं  
उन्वितत्वात्पुनश्छन्दाँसीतिपदं चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं ज्ञापयती  
त्ववधेयम्।' (श्रु० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् 'वेदों में सब मन्त्र  
गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर (छन्दाँसि) इस पद के कहने  
से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है  
अन्यथा 'छन्दाँसि' का यहां कोई प्रयोजन नहीं। इस अर्थ में अन्  
प्रमाण भी देखो।

(१) "ऋचाम्.....गायत्रं छन्दः ।

यजुषां.....त्रैष्टुभं छन्दः ।

साम्नाम्.....जागतं छन्दः ।

अथर्वणां.....सर्वाणि छन्दांसि ।"

गो० ब्रा० १।१।२६

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द  
सम्बन्धी है [यद्यपि यह अनुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री(२४५  
की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ? ] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द  
सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है। अब रहा अथर्ववेद  
तो वह पूर्वोक्त गोपथब्राह्मण के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द-सम्बन्ध  
है। उस का किसी एक छन्द से सम्बन्ध-विशेष नहीं। यही कारण  
कि उपस्थित मन्त्र में 'छन्दाँसि' पद से अथर्ववेद का ग्रहण होता

(२) प्रस्तुत मन्त्र-सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य  
है। अथर्ववेद में यह मन्त्र निम्नलिखित प्रकार से आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दो ह जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्माद् जायत ॥

अथर्व० १६।६।१

यहाँ 'छन्दांसि' के स्थान में 'छन्दो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपटलिका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के सिंहितान्तर्गत होनेके विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो सब को स्वीकार करना पड़ेगा कि बहुवचनान्त 'छन्दांसि' पद का अर्थ एकवचन 'छन्द' अर्थात् (पूर्व प्रमाणाँ की दृष्टि से) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जञ्जिरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये; यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण सम्प्रदाय वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'छन्दांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाणाँ देखो—

(३) यस्मादृचो अपातन्तु यजुर्यस्मादपात्तन् । सामानि यस्य  
लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्वदेवसः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एकवचन में है, और अथर्वाङ्गिरस स्पष्ट ही ऋग्वेद का द्योतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" ऋ० १०।६०।६ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामाश्रमी त्रयीपरिचय तथा निरुक्तालोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद छन्द और गान दो भागों वाला है। सो छन्द भाग का ग्रहण छन्दांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इसका कुछ खण्डन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्व के उपोद्धात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके विचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूखसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' वा 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यव्रत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निराधार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यव्रत जी के पक्ष को एक बात कुछ आश्रय दे सकती है, यद्यपि यह उन्होंने ने स्वयं नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलाद शास्त्रा में 'सामानि यस्य लोमानि' के स्थान में 'ऊन्दांसि यस्य लोमानि' पाठ आया है। ऐसी दशा में सत्यव्रत कह सकता था कि 'ऊन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के ऊन्द भाग का द्योतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे चल कर और भी विदित हो जायगा सामवेद वाचक हैं। वैसा कोई ऊन्द वेद ही नहीं, और 'ऊन्द' पद अथर्ववेद वाची सिद्ध ही चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस उपोद्धात के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिलें (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

### विदेशीय (पारसीक) भाषा में ऊन्द का अर्थ।

भाषा-विद्वानी जानते हैं कि ऊन्द शब्द ही पारसीक भाषा में ऊन्द बना है। यही ऊन्द पारसीकों का धर्मग्रन्थ है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई बार आया है। हाग के मतानुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार अतीत होता है कि ऊन्द का अथर्ववेद से सम्बन्ध-विशेष है, अतएव ऊन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी दशा में 'सामानि' आदि पद भी सामवेद आदि के वाचक हैं।



## ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

- (१) सामवेद आदित्यात् (ऐ० २५।७)
- (२) आदित्यात्सामानि (कौशी० ६।१०)
- (३) सूर्यात् सामवेदः (शा० ११।५।८)
- (४) सामान्यादित्यात् (छाँ० उ० ४।१७।२)
- (५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१५।७)
- (६) सामवेदोऽमुष्मात् (षड्विं० ४।१)
- (७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणशास्त्र एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद मन्त्रों की व्याख्या में ही कहे गये हैं । इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्रह्मादि ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था । अतएव "तस्माद्यज्ञात्" मन्त्र का इस वेद के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं । इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि श्यामन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है । हम ने तो उसी का उद्धरण मात्र दिया है ।

## इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पूर्वोक्त से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद ब्रह्मी षड्-रुक्मभ-परब्रह्म से प्राप्त हुए । यहां यह विवाद नहीं उठाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है ? इसे किसी अन्य अक्षर पर खूंगा । यहां अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ वा अनेकों को ।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जो यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के अधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र-द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह-धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैथुनि सृष्टि का एक सभासद था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इनको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हां, अग्नि ईश्वरदेव का नाम तो सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष व्याख्यान भगवान् दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पक्ष के खण्डन में 'जड़अग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का खण्डन हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्यात्=आदित्यात्=अमुष्मात् पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपक्ष) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के नाम होते तो उन के पर्याय आदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय "योऽयं पवते" श्रुत० ११।५।८।२ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्मात्" प्रयोग स्पष्ट इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समाज का सदस्य था तो क्या वह "योऽयं पवते" अर्थात् "जो यह बहता है" ऐसा ही था? क्या मनुष्य भी पवन समान बहते हैं?

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत वाङ्मय के न जाने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष खड़े होते हैं। देखो महाभारत को—

(क) वहां कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का भ्राना लिखा है। यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था। उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं।

अभिप्रायमथो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः ।

कुण्डलार्थे महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥

स्वप्नान्ते निशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान् ।

कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥८॥

ब्राह्मणो वेदविद्भूत्वा सूर्यो योगद्विरूपवान् ॥९॥

अहं तात सहस्रांशुः सौहृदाच्चां निर्देशये ॥२२॥

इस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-समन्वित सूर्य महात्मा ब्राह्मण वेष में रात्रि के अन्तिम ग्रहर में कर्ण के जागने पर उसके समीप आया। उस सूर्य के यहां कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु = रश्मिवान् = सहस्रांशु। अब रामायण पर किञ्चित् ध्यान दो—

(ख) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात वर्णन है। वहां भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं। ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा युक्त विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवेतर जाति सिद्ध नहीं हो सकती। और संत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के क्रमशः पर्याय-प्रयोग का देख कर ही मध्यम काशीन लोगों ने इन्हें देवता वा पशु मान लिया था। अन्त में ब्राह्मण ग्रन्थों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा है। वहाँ उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आ। वहाँ मूख ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कारों भाग मि करके औपनिषद्-भाव अधिक खोला गया है। परसब से आ विचारणीय यह है कि वहाँ मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं वंथा "बभ्रु अन्तक १।२६"।

(घ) ऋग्वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी आये हैं जैसे "अग्निः पावकः" ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः १०।१४१॥ यहाँ विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक श प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पय हों तो वे भी उसी के नाम के लिये प्रयुक्त हो जाते थे। और उ महाभारत में 'सूर्य' को 'रश्मिवान्' आदि कहा है वैसे ही शतत ब्राह्मण में 'वायु' को 'धोऽयं पवते' कह दिया गया है। अता ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में "आदित्य" मनु देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का अविद्यता वे नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया उसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैला गया। पड़विश्वब्राह्मण में जो "अमुष्मात्" प्रयोग आया है उस व यही अग्निप्राय है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा स सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिस्थ ब्रह्मा में शिर की नाडिका में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आ गया है।

## सामवेद की शाखाएं ।

आर्यावर्त में सृष्टि के आरम्भ से लेकर दीर्घ कालपर्यन्त लौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा । उस समय वेदादि शाखा आज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे । तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के लामार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे । उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे । तब किन्हीं विस्तृत भाष्यों की आवश्यकता न थी । यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसी प्रवचन के सम्बन्ध में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

“ न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते । नित्यानि च्छन्दांसीति । यद्यप्यर्थो नित्यो या त्वसौ वर्णानुपूर्वी सानित्या । तद्देदाच्चैतद्रवति काठकं कालापकं मौदकं पैप्पलादकमिति । ” ४ । ३ । १०१ ॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गईं । इनका शब्दार्थ नित्य है । हां, अर्थ के नित्य होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य है । इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोला है । और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं ।

( प्रश्न ) मूल सामवेद जिस की आगे शाखाएं बनीं अब कहां हैं ? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें । अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग् भाग सम्मिलित है ।

( उत्तर ) मूल सामवेद था तो अचश्य क्योंकि बिना इस के साम-शाखाएं बनती कैसे, और प्रवचन किस का होता ? उसी मूल का वर्णानुपूर्वी ऋग्वेदादि वेदों और पेतरेय आदि ब्राह्मणों में आया है । वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बल से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया । ऋग्वेदीय ऋचाएं सामवेद में नहीं

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा आ है। वहाँ उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है वहाँ मूख पतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोला गया है। पर सब से अधिक विचारणीय यह है कि यहाँ मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिए गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं वंथा "बम १। अस्तक १।२६"।

(घ) वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आये हैं जैसे "अग्निः पावकः" ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः ऋ० १०।१४१॥ यहाँ विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणाँ से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के द्विजे प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में 'सूर्य' को 'रश्मिवान्' आदि कहा है वैसे ही शतपथ ब्राह्मण में 'वायु' को 'योऽयं पवते' कह दिया गया है। अतएव ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणाँ में "आदित्य" मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का अविष्टाता देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। इसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। पड़विशब्राह्मण में जो "अमुष्मात्" प्रयोग आया है उस का यही अभिप्राय है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिस्थ दशा में शिर की नाड़ियों में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आ गया है।

## शाखा-विभाग ।

अब रहा शाखा-विभाग पर विचार । इस पर प्रकाश डालने वाला कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं । एक चरणा-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है । यह विक्रम से पांच, छः सौ वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है । इस में पाठभेद का बाहुल्य है । नीचे उसी की साक्षी उपस्थित की जाती है ।

### चरणव्यूह की साक्षी ।

शौनकीय परिशिष्ट ।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति ।  
एष्वनध्यायेष्वधीयानारते शतक्रतुवज्रे-  
णाभिहताः ।

शेषानध्याख्यास्यामः । तत्र राणायनीया  
नां सप्तभेदा भवन्ति । (१) राणाय-  
नीयाः (२) शात्यमुग्राः\* (३) का-  
लोपा (४) महाकालोपा (५) लाङ्ग-  
लायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौथु-  
माश्चेति ।

महिदास-प्रदर्शित प्रकारान्तर ।

तत्र कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति ।  
(१) कौथुमाः । (२) आसुरायणाः  
(३) घातायनाः (४) प्राञ्जलिद्वैन-  
मृतः (५) प्राचीनयोग्याः (६)  
मैगमीयाः ।

अथर्व-परिशिष्ट ।

तत्र सामवेदस्य शाखासहस्रमासीत् ।  
अनध्यायेष्वधीयानाः सर्वे ते शक्रेण  
विनिहतः [प्रविलीनाः] तत्र केचिदवा-  
शिष्टाः प्रचरन्ति । तथा ।

(१) राणायनीयाः (२) साद्य-  
मुग्राः \* (३) कालापाः (४) महा-  
कालापाः (५) कौथुमाः (६) लाङ्ग-  
लिकाश्चेति ।

कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति । तथा ।  
(१) सारायणीयाः (२) वातराय-  
णीयाः (३) वैतधृताः (४) प्राचीनाः  
(५) तेजसाः (६) अनिष्टकाश्चेति ।

\* सात्यमुग्रा नाम अधिक युक्त है । महाभाष्य १ । १ । ४ ॥

१ । १ । ४८ ॥ पर ऐसा ही पाठ है ।

जहां सैकुण्डों साम-शाखाओं के नाम विलुप्त हो गये हैं वहां विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शाखा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ अन्य नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदसर्वस्व के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्होंने स्व-बुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १८५६ के काशी-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्त्तान्तरिया [वार्त्तान्तवेया:] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जला:] (५) ऋग्वैतविधा: [ऋग्वर्णा-भेदा:] (६) प्राचीनयोग्या: [७ ज्ञानयोग्या:] (७) राणायनीयाश्चेति। तत्र राणायनीयानां नव भेदा भवन्ति। (१) राणायनीया: (२) शाठ्यायनीया: (३) शाठ्यमुद्रा: [सात्वला:] (४) खल्वला: (५) महाखल्वला: (६) लाङ्गला: (७) कौथुमा: (८) गौतमा: (९) जैमिनीयाश्चेति।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं "सहस्रवर्त्मा सामवेदः" ( महाभाष्य कीलहार्न सं० भाग १, पृ० ९ ) अर्थात् 'सहस्र शाखा वाला साम वेद है।' उन्हीं सहस्र शाखाओं में से कुछेक का उल्लेख पूर्वोक्त चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शाखा-नाश-इतिहास में तथ्य की किस अल्पमात्रा का होना सम्भव है। तदनुसार वर्षा वा किसी विद्युत्-प्रकोप वाले दिन किसी सामशाखीय अध्यापक ने अपनी शाखा का पाठ किया होगा। वह इन्द्र=सूर्य के वज्र=तड़ित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठा होगा। साथ ही

१-काशी-संस्करण में किसी अष्ट-पाठ को देखकर कौथुमी, गौतमी छपा हैं।



उस के ग्रन्थ विनष्ट हो गये होंगे\* । परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है । घस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी ।

सम्प्राप्त तीन शाखाएं ।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं । चरणव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है । 'गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा । कार्णाटकके जैमिनी प्रसिद्धा । महाराष्ट्रदेशे राणायनीया प्रसिद्धेति ।' अर्थात् गुजरात में कौथुमी, कार्णाटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में राणायनीय शाखा प्रसिद्ध हैं ।

पूर्वोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है । इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है । अन्य प्रबल कारणों की आगे खोज होनी चाहिये ।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुंचे हैं । (१) तारुण्य महा-ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा छान्दोग्य ब्राह्मण । ( विबलियोथीका इण्डिका संस्करण संवत् १९२७-३० ) । (२) षड्विंशब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा "विज्ञापनभाष्य-सहितम्," एच० एफ० ईलसिंह सम्पादित, लीडन १९०८) । (३) सामविधानब्राह्मण ( ए० सी० बर्नेल सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १९५१ ) । (४) आर्वेय ब्राह्मण ( ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रतसा० सम्पा०

\* अलबेरुनी लिखता है कि 'उस के काल से कुछ पूर्व ही कश्मीर के वसुक नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी ।' (अलबेरुनी का भारत भाग दूसरा । श्रीसंतरामकृत अनुवाद । सन् १९२० । पृ० ३१) । हमें इस बात पर विश्वास नहीं ।

सं० १६४८ ) । (१) देवताध्याय वा दैवत ब्राह्मण ( ५० सी० बर्नेल सम्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१ ) । (६) उपनिषद् ब्राह्मण—(क) मन्त्रब्राह्मण ( सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १६४७ तथा प्रथम प्रपाठकमात्र के० स्टोन्नर सम्पा० १६०१ ) (ख) छान्दोग्योपनिषद् ( अनेक संस्करण निकल चुके हैं ) । (७) संहितोपनिषद् ५० सी० बर्नेल सन् १८७१ ) । (८) वंशब्राह्मण ( ५० सी० बर्नेल सम्पा० १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १६४६ ) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । वह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पञ्चीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पञ्च अध्यायात्मक षड्विंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दोग्योपनिषद् (४) दो अध्यात्मक गृह्य-कर्म-प्रधान मन्त्रब्राह्मण । सारा ब्राह्मण चाळीस अध्याय युक्त था । अन्य पांच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के शुद्ध वैज्ञानिक संस्करण न रूप जावें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये अयुक्त है । इस का विचार तभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काल-निरूपण हो जावे ।

## ताराज्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३८॥ पर एक वार्तिक है “चरण सम्बन्धेन निवास लक्षणोऽयम्” इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी नौ (९) श्रुतियों को निवास-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । “त्रयः प्राच्याः । त्रय उदीच्याः । त्रयो माध्यमाः ।” काशिकाकार इसी वाक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४। ३। १०४ ॥ पर लिखता है—“वैशम्पायनान्तेवासिनो नव ।” आगे चलकर वह कुछ प्राचीन कारिकाएं उद्धृत करता है । उन में से एक का अर्थ भाग यह है—

## ऋचाभारुणितारुड्याश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, आरुणि और तारुड्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य माध्यम=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से तारुड्यों की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पता पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहाँ ६।२।३७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। “कठकालापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाक्षाः।” हम कह चुके हैं कि कठ और तारुड्य आदि सतीर्थ्य=एक गुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु तारुड्यों का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और तारुड्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये “कठकौथुमाः” कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान ब्राह्मण के अन्त में जो ऋषि-परम्परा दी है वहाँ तारुड्य का गुरु प्राजापत्यविधि से बादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तमिमं प्रजापतिर्वृहस्पतये प्रोवाच ।  
 बृहस्पतिर्नारदाय । नारदो विष्वक्सेनाय । विष्वक्सेनो व्यासाय  
 पाराशर्याय । व्यासः पाराशर्यो जैमिनये । जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय ।  
 पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय । पाराशर्यायणो बादरायणाय ।  
 बादरायणस्ताण्डिशायनिभ्याम् । ताण्डिशायनिनौबहुभ्यः॥

एक तारुड्य का वर्णन शतपथब्राह्मण ६।१।२।२५ में आया है— “अथ ह स्माह तारुड्यः ।” अतः इतना निश्चित है कि चाहे तारुड्य कोई भी हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संहिता क्यों कौथुम हुई और मूल सामवेद क्यों कौथुम कहलाया? इस के विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मशककल्पसूत्र

अथवा आर्षेयकल्प ( डबल्यू० कालेगड सम्पा० सन् १९०८ ) ।  
(२) शुद्रसूत्र आर्षेयकल्प का परिशिष्ट ही है ( उसी के उत्तर भाग में छपा है ) । (३) ताठ्यायन श्रौतसूत्र ( बिब० इगिड० सं० १६२८ ) ।  
(४) गोभिलीय गृह्यसूत्र ( क्लापर सम्पा० १८८४ सन् तथा बिब० इगिड०, द्वि० सं०, सन् १६०८ ) । (५) श्राद्धकल्प, परिशिष्ट, गोभिल अथवा वसिष्ठकृत ( बिब० इगिड० द्वि० सं० सन् १६०६ ) ।  
(६) कर्मप्रदीप अथवा छन्दोगगृह्यपरिशिष्ट ( धर्मशास्त्रसंग्रह, सन् १८७६, जीवनानन्द संस्करण के पूर्वार्धे पृ० ६०३-६४४ तक, कात्यायन-स्मृति वा कात्यायनविरचित कर्मप्रदीप के नाम से छपा है । तथा प्रथम प्रपाठक फ्र० श्रेडर सम्पा०, हूले १८८६ सन् तथा बिब० इगिड० में सन् १६०६ और द्वि० प्रपाठक स्र० होलस्टाईन सम्पा० हूले सन् १८६० ) ।  
(७) गृह्यासंग्रह, गोभिलपुत्रकृत ( ब्लूमफील्ड द्वारा Z.D. M. G. Vol ३५ में सम्पा० तथा बिब० इगिड० द्वि० सन् १६१० ) । (८) पञ्च-विधसूत्र ( सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० ज़ीमन सम्पादित १६१३ ब्रेसला ) । शिज्ञानग्रन्थों में तीन शिज्ञा प्रसिद्ध हैं ।

(१) नारदीय शिज्ञा ( सत्यव्रतसा० सं०, दत्तात्रेय सम्पा० लाहौर सन् १६०६ तथा शिज्ञासंग्रह काशी में, सन् १८६३ ) । (२) खोमशीय शिज्ञा ( शिज्ञा संग्रह सं० ) (३) गौतमीयशिज्ञा ( शिज्ञा संग्रह सं० ) । प्रातिशाख्यों में निम्नलिखित ग्रन्थ हैं ।

(१) ऋकतन्त्र ( ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७६ ) । (२) सामतन्त्र ( दयानन्द महाविद्यालय के लालचन्द पुस्तकालय में इस की एक प्रतिलिपि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के संग्रह के एक ग्रन्थ से कराई गई थी ) । (३) पुष्पसूत्र वा फुल्लसूत्र ( रि० ज़ीमन सम्पादित ) ।

कुल चौदह (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है । इन के अतिरिक्त अठतीस (३८) और ग्रन्थ हैं ! उन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr. W. Caland, Breslau, 1917) पृ० १३—१५ पर देखो ।

## २. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं छपी । इस के सूत्र ग्रन्थ निम्नलिखित हैं ।

- (१) द्राह्यायण श्रौतसूत्र (कुछ भाग रियूटर सम्पादित लण्डन १६०४ सन्) । (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायण गृह्यसूत्र (मैसूर राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १६१३ सन् तथा आनन्दाश्रम पूना सन् १९१४) । (३) गौतमपितृमेधसूत्र (कालेण्ड सम्पा० जार्जपज़िग १८६६ सन्) । (४) गौतमस्मृति ( स्मृतिसमुच्चय, पूना ) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये बिना नहीं रह सकते—

“ परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह बताता है कि गोभिलसूत्र कौथमों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणायनीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने श्राद्धकल्प में तीन बार (पृ० १४२४, १४६०, १४६८) गोभिल को राणायनीय-सूत्रकृत कहता है । यदि यह बात मान ली जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूलों के एक खादिर गृह्यसूत्र की विद्यमानता कही जाती है । ( देखो Report on a search for Sanskrit mss. in the Bombay Presidency 1892-95, by A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79 ) । शारदूल भी सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल सामगों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्रायः मिलता

वताया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की प्पेतिह्य शृङ्खला अटूट थी, यह भी श्राद्धकल्प से ज्ञात होता है। उस में (पृ० १०७८) पर, वह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वालों को गाने चाहियें। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम खादिरगृह्यसूत्र में मूलतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और प्पेतिह्य भी खादिर-सूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ सन् में कण्ठभूषण भाष्य संहित जो गृह्यरत्न रूप है उस में अनेक वार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे खादिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेधसूत्र है, एक गौतम धर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० लगडन १८७६) \* और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है।”

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ श्री कालेण्ड-प्रदर्शित ये सब पत्र उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे ॥

## जैमिनीय शाखा ।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं । (१) जैमिनीय संहिता (Dr. W. Caland's edition, Breslau, 1907.) । (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड हन्नस अर्टेल ने पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में छप गया है—Das Iaiminiya Brāhmana in Auswahal, Amsterdam, 1919) हस्तलिखित सामग्री के अपर्याप्त होने से यह बृहद्ब्राह्मण अभी पूरा नहीं छप सका) । (३) जैमिनीय-उपनिषद्ब्राह्मण (अर्थात् गायत्र्युपनिषद्,

\* इसके दो भारतीय संस्करण निकल चुके हैं (१) मैसूर (२) मद्रास ।

पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। हज़स अर्टेलसम्पा० १८६४ सन्)  
 (४) आर्षेय-ब्राह्मण ( ५० सी० बर्नेल सम्पा० मंगलोर १८७८ )।  
 (५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गैस्ट्रा सम्पा०  
 लार्डन सन् १९०६)\*। (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr.  
 W. Caland, Amsterdam, 1905.)†

## जैमिनीय-ब्राह्मण ।

“ शौनकादिभ्यश्छन्दसि । ” ४।३।१०६ के गण में पाणिनि  
 “तलवकार” शब्द पढ़ते हैं। इसी तलवकार ऋषि के नाम पर  
 तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का अब जैमिनि-शाखा नाम  
 हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के  
 समान ब्राह्मण को भी अब जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं—  
 “ केनेषितम् ” इत्याद्योपनिषत्परब्रह्मविषया वक्तव्येति नवमस्या-  
 ध्यायस्यारम्भः । प्रागेतस्मात्कर्माययशेषतः परिसमापितानि समस्त-  
 कर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासनान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि  
 च । अनन्तरं च गायत्रसामविषयं दर्शनं वंशान्तमुक्तम् ।”

(अर्थ) “केनेषितम्” से आरम्भ होने वाली, परब्रह्मविषय के  
 कहने वाली उपनिषद् कही जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का  
 आरम्भ है। इस से पूर्व (आठ) अध्यायों में यज्ञ कर्म पूरे कहे गये  
 हैं। प्राणोपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रसाम और वंश  
 कहा गया है। तलवकार ब्राह्मण का यह वर्णन शङ्कर ने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिलता है उसका अध्यायक्रम

\* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र सभाष्य बड़ोदा राजकीय ग्रन्थसाला में  
 शीघ्र ही छपेगा।

† जैमिनीय गृह्यसूत्र का कॉलेज्ड सम्पादित भारतीय संस्करण ला०  
 मोतीलाल बनारसीदास सैदमिन्ना बाज़ार लाहौर द्वारा शीघ्र प्रकाशित किया जायगा।

शाङ्कर-प्रदर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न है। प्रथम तीन अध्याय हैं। पञ्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उस में चार अध्याय हैं। केन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इक्कीसवें पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सो सारे भिन्न के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आर्षेय-ब्राह्मण भी मिला लिया जावे तो सारे आठ अध्याय होते हैं। सम्भव है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जावे।

### उपनिषद् ब्राह्मण ।

उपनिषद् ब्राह्मण को हब्रस अर्टेल महाशय ने अमेरिकन ओरिपेण्टल सोसायटी के जर्नल सं० १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे कहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तय्यार किया था। वही अब यहां छपा गया है।

### हस्तलिखित सामग्री ।

जिस हस्तलिखित सामग्री से अर्टेल ने अपना संस्करण तय्यार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. बनेल के नोटानुसार जो लपेटने वाले कागज़ पर है, यह हस्तलेख "मलाबार हस्तलेख से नकल किया गया," १८७८ सन् में। अन्त में वह लिखता है "मूल की तिथि, कुलम १०४०=१८६४ सन्। पलघट के हस्तलेख से।"

B. तालपत्रों पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, त्रिजेवली से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से लाया गया था।" इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. बनेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। यह ११५६ पर समाप्त हो जाता है।



A. ग्रन्थ का पाठ और B. के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिवर्षीय कागज पर हैं। वे प्रो० जानअवेरे द्वारा रोमन में लिखे गये थे, और कापी प्रो० द्विटने ने मूल से मिला ली थी। उन्होंने C. के पाठभेद भी दे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तय्यार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफिस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तलवकारब्राह्मणे उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअटेल ने यह लिखा है। “वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A. अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B. और C. की अथवा कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियाँ और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २१ से A. और B. अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पहली कण्डिकाएं (२१-३) छोड़ते हैं, और २४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३४=५७। B. में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्कों के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B. में ३१८ पर ७०, ३२२ पर ७३, ३३२ पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

“तीनों हस्तलेख एकही सदीष मूल से आए हैं। तीनों में बहुत सामान्य भ्रष्टपाठ हैं। विराम, अक्षर-विन्यास और सन्धि-सम्बन्धी

बातों में भी वे असावधानी से लिखे गए हैं। मैंने इन बातों के ठीक करने में स्वतन्त्रता घटी है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ-भेद पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्वेशों की सरलता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क दे दिया है। हस्त लेखों में कण्डिकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमेरिकन संस्करण के अन्त में अटेल महाशय ने चार सूचियां दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक् करके उनकी सूची दे दी है। अन्य शब्दों को इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपलब्ध ब्राह्मणों आदि की एक विस्तृत सूची तय्यार हो रही है। उसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहां छापना आवश्यक नहीं समझा। सूचियां (२) और (४) भी हमने दे दी हैं। तीसरी को हम आर्यावर्चीय परिदत्तों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

पं० रामदेव ने पाठभेदों को देने के लिये A.B.C. के हवाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्होंने Omitted के स्थान में "ओम" दिया था। मैंने आगे चल कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द "नास्ति" कर दिया है। यह संस्कृत शब्द होने से पतदेशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। अटेल ने प्रत्येक खर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में 's' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है, अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है ॥

## जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, बृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है। इस का मूल नाम "गायत्र उपनिषद्" है। जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है। यह नाम ही सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है। उसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है। जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन  
देवा एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् वह यही अमृत गायत्र (साम) है। इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अन्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि)।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४२॥ और ४।१६, १७॥ पर दो वंश परम्पराएं आई हैं। अन्तिम वंश परम्परा पहली से कुछ ही अन्य नाम रखती है। यह है भी छोटी। पहली का आरम्भ "ब्रह्म" से होता है। (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के लिये। उसने (३) परमेष्ठी के लिये। उसने (४) देवसविता के लिये इत्यादि।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी दशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पहले दो ऋषि वंशावलियां आई हैं। पूर्वली में बताया गया है कि स्वयंभु ब्रह्म ने प्रजापति को विद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को। जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है। अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत यह उस तक प्रजापति द्वारा आया।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं ।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वंश में ब्रह्म से लेकर अपने आप (वयं) तक ६८ नाम हैं । जै० उ० ब्रा० के प्रथम वंश में ब्रह्म से लेकर वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं । प्रत्येक ब्राह्मण के सब वंशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छोड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी संख्या होजायगी। इस से प्रतीत होता है कि आर्यावर्त के इतिहास में ब्राह्मणों के संकलन का समय प्रायः एक ही था । ब्रह्मा से जो अनेक विधायें अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्रायः एक काल में एकत्र कर ली गईं । जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय संकलित हुआ ।

जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि वे अटैल के कई पाठ शुद्ध कर देंगे । तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे । उन्होंने उनके हाशिये पर संशोधन कर दिया है । वह भूमिका के अन्त में छाप दिया गया है । अगले पृष्ठों का संशोधन फिर कभी छपा जायगा । इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं मेरा, ध्यान उधर खेंच कर किया है, मैं उन का अत्यन्त अनुगृहीत हूँ ।

इस ग्रन्थ के पूफ पं० विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री, तथा पं० हंसराज पुस्तकाध्यक्ष लालचन्द पुस्तकालय ने देखे हैं । इन दोनों महाशयों का भी मैं कृतज्ञ हूँ ।

परमदयामय भगवान् अपनी कृपा से इन हृदय-पावक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें । इत्योम्

दयानन्द महाविद्यालय

लालचन्द पुस्तकालय लाहौर

माघ, संक्रान्ति सं० १९७७

भगवद्दत्त

# श्री कालेगड-प्रदर्शित सटिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०सिच्यदेवमे०	सिच्येतैवमे०
५,	१	हैषा खला	हैषाखला
५,	७	उतैषां खला	उतैषाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
हस्त ले० पाठ शुद्ध है। देखो पाठ भेद ।			
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ळयित्वा पनि०	ळयित्वापनि०
८,	६	ववर्ज	ववृजे*
८,	६	बहुर्भू०	बहोर्भू०
११,	१२	वै वेद०	वावेद०
१६,	४	यदमृते	यदनृचे
१७,	८	देवा	देवाः
१७,	८	कस्मादु	कस्मा उ
२०,	६	०सप्तहोरात्राः	सप्त होत्राः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उच्चा	[उच्चा]
३७,	८	ह चै०	ह [स्म] चै०
४०,	२	तद्यद्वै	यद्यद्वै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेदं अग्र	प्रजापतिर्वावेदमग्र
४६,	१२	सुनोति	सनोति
५३,	२	०सर्क	०सर्क
५३,	४	०ायतन	०ायतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूता वै	०पुनीध्वमपूता वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपर्च

\* The mss. (Grantha) have ववृज or वव्रज which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return ववृजे ।

† इदमायतना is a bahuvrīhi compound, पाठभेद जो नीचे दिया है, वह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

# शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
मू० ४	५	सिंहि०	संहि०
" ६	४, ६, ८, ११	अग्नि	सूर्य
१६	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर तद०	यत्परतद०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रेय स	श्रेयस
६३	२	पवं वि०	पवंवि०
१००	१५	०भ्य	०भ्य—
१०६	१४	वाङ्	वाङ्
१०७	१५	० पाणौ	० पानौ
१११	७	युष्मासु	युष्मासु
११३	११	रतो	रेतो
१३६	३	०सपृणाति	स्पृणाति
१४२	६	स्वगस्य	स्वर्गस्य
१४६	६	चकुलं	चकुलं

---

# जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

---

# जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्



प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद् यदस्येऽदं जितं  
तत् ॥ १ ॥ स ऐक्षतेऽत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त  
इमां वाव ते जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम । हन्त त्रयस्य वेदस्य रस-  
माददा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येवर्षेदस्य रसमादत्त । सेऽयम्पृ-  
थिव्यभवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् सोऽग्निरभवद्रसस्य रसः  
॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त । तदिदमन्तरिक्षम-  
भवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् स वायुरभवद्रसस्य रसः ॥ ४ ॥  
स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सौऽसौ द्यौरभवत् । तस्य यो  
रसः प्राणोदत् स आदित्योऽभवद्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथैऽकस्यै-  
ऽथाऽक्षरस्य रसं नाऽशक्रोदादातुम् ओमित्येतस्यैऽव ॥ ६ ॥  
सेऽयं वागभवत् । ओमेव नामैऽषा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥  
तान्येतान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री ।  
तद् उ ब्रह्माऽभिसंपद्यते । अष्टाक्षराः पञ्चवस्तेनो पञ्चव्यम् ॥ ८ ॥ १, १

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।



स यद् ओमिति सोऽग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वायुर्वा-  
 गित्यन्तरिक्षमोमित्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव  
 वाक् ॥ १ ॥ स य एवं विद्वानुद्गायत्योमित्त्वेवाऽग्निमादाय पृथि-  
 व्याम्प्रतिष्ठापयत्वोमित्येव वायुमादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-  
 मित्येवाऽऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्त्वेव प्राणमादाय  
 वाचि प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्वैऽतच्छैलना गायत्रं गायन्त्यो-  
 वा ३ च ओवा ३ च ओवा ३ च हुम्मा ओवा इति ॥ ३ ॥ तद् ह  
 तत्पराङ् इवाऽनायुष्यम इव । तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्म गेयम् ॥ ४ ॥  
 यद्रे वायुः पराङ् एव पथेत क्षीयेत् ( स ) । स पुरस्ताद्वाति स  
 दक्षिणातस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरिष्ठात्स सर्वा दिशोऽनुसं-  
 वाति ॥ ५ ॥ तदेतदाहुरिदानीं वा अयमित्तोऽवासीदथेऽस्थाद्वाती  
 ऽति । स यद्रेष्माणं जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव बिभ्यत्  
 ॥ ६ ॥ यद् ह वा आपः पत्तचीरेव प्रसृत्वास्स्यन्देरन् क्षीयेरंस्ताः ।  
 यदङ्कांसि कुर्वाणा निवेष्टमाना आवर्तान् सृजमाना यन्ति क्षयादेव  
 बिभ्यतीः । तदेतद्वायोश्चैवाऽपां चाऽनु वर्त्म गेयम् ॥ ७ ॥ १, २ ॥  
 प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

२. १ अन्तरीक्षं । २ आपा । ३ वाची । ४ छेजं, क्षीजं । ५  
 च । ६ पराङ्, पुराद् । ७ रिष्ठात् । ८ सीत् । ९ यजमानो, जमानो ।  
 १० वम् ११ यद्, यद् १२ अङ्कांसि ।

ओवा<sup>१</sup> ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति कुरोत्येव<sup>२</sup> । एताभ्यां  
 सर्वमासुरेति ॥ १ ॥ स यथा वृत्तमाक्रमणै<sup>३</sup>राक्रममाण इयादे-  
 वमेवैऽते द्वे-द्वे देवते संधायेऽमां लोकान् रोहन्नेति ॥२॥ एक उ  
 एव मृत्युरन्वेत्यशनयैऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्करोति । चन्द्रमा  
 वै हिङ्करोऽन्नमु वै चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां भ्रान्ति ॥ ४ ॥  
 तां-तामशनयामन्नेन हत्वोऽमित्येतमेवाऽऽदित्यं समयाऽतिमुच्यते ।  
 एतदेव दिवश्छिद्रम् ॥ ५ ॥ यथा खं वाऽनस<sup>६</sup> स्स्याद्रथस्य वैऽवमे-  
 तदिवश्छिद्रम् । तद्रश्मिभिस्संछन्नं दृश्यते ॥ ६ ॥ यद्वायत्रस्योऽऽ-  
 र्ध्वं हिङ्कारात्तदमृतम् तदात्मानं दध्यादथो यजमानम् । अथ  
 यदितरात्<sup>७</sup> सामोऽऽर्ध्वं तस्य प्रतिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽद्रिरा-  
 षस्संसृज्येरन् यथा ऽग्निनाऽग्निस्संसृज्येत यथा क्षीरे क्षीरमा-  
 सिच्येद्यादेवमेवैऽतदक्षरमेताभिर्देवताभिस्संसृज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं वा एतं हिङ्कारं हिम्भा इति हिङ्कुर्यन्ति । श्रीर्वै भाः ।  
 असौ वा<sup>९</sup> आदित्यो भा इति ॥१॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गभे

३. १ ओव २ ऐव ३ अक्रम ४ इति ५ त्यां, त्य ६ नस ७ रसस्य  
 ८ अ ९ त्वद्, तद् (?) १० रान् ।

४. १ ओम् २ गंभ ।

इति । यद् इति स्त्रीणाम् प्रजननं निगच्छति तस्मात्ततो ब्राह्मणा  
 ऋषिकल्पो जायतेऽतिव्याधी राजन्यश्शूरः ॥ २ ॥ एतं ह वा  
 एतं न्यङ्गमनु वृषभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्ततः पुण्यौ  
 बलीवदो दुहाना धेनुरुक्षा दशवाजी जायन्ते ॥ ३ ॥ एतं ह वा  
 एतं न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्स पापीया-  
 ज्ज्येयसीषु चरति तस्मादस्य पापीयसश्श्रेयो जायतेऽश्वतरो वा-  
 ऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु कुभ्र इति । यद् इति  
 निगच्छति तस्मात् सोऽनार्यस्सन्नपिराज्ञः प्राप्नोति ॥ ५ ॥ तं है-  
 ऽतमेके हिङ्गारं हिम्भा ओवा इति बहिर्धेऽव हिङ्गुर्वन्ति । बहिर्धे  
 ऽव वै श्रीः । श्रीर्धे साम्नो हिङ्गार इति ॥ ६ ॥ स य एनं तत्र  
 ब्रूयाद्बहिर्धान्वा अयं श्रियमधित पापीयान् भविष्यति<sup>१</sup> ।

स यदा वै म्रियतेऽथाऽग्नौ प्रास्तो भवति ।

क्षिमेवत मरिष्यत्यग्नौवनम्प्रासिष्यन्ति”इति तथा हैऽव स्यात्  
 ॥ ७ ॥ तस्माद् हैः तं हिङ्गारं हिं वो इत्यन्तरिवैश्वाऽऽत्मन्न-  
 र्जयेत् । तथा ह न बहिर्धा श्रियं कुरुते सर्वमायुरेति ॥ ८ ॥ १, ४

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४. ३ स्त्रीणां ४ जायत इतिव्य ५ यषत् ६ य ७ 'इति' अधिक ८  
 नाक्थ्यरस्स, नार्थ्यस ९ ओम् बहिर्धेऽव.....तत्र ब्रूयाद् १०  
 बहिर्धेवे, ओम् । व ११ यतीऽति

सा हैऽषा खला देवताऽपसेधन्तीऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र  
पापमकर्णोऽहैऽऽष्यसि । यो वै पुण्यकृत् स्यात् स इहेऽयादिति  
॥१॥ स ब्रूयादपश्यो वै त्वं तद्यदहं तदकरवं तद्वै मा त्वं नाऽका-  
रयिष्यस्त्वं वै तस्य कर्ताऽसीति ॥२॥ सा ह वेदसत्यम्माऽऽहै-  
ऽति । सत्यं हैऽषा देवता । सा ह तस्य नेऽऽशे यदेनमपसेधेत्  
सत्यमुपैऽवह्वयते ॥ ३ ॥ अथ होऽवाचैऽऽच्चाको वा वार्ष्णे-  
ऽनुवक्ता वा सात्यकीर्त उतैषा खला देवताऽपसेद्धुमेव ध्रियतेऽ-  
स्यै दिशः ॥ ४ ॥ [ तद् ] दिवोऽन्तः । तदिमे द्यावापृथिवी  
संश्लिष्यतः । यावती वै वेदिस्तावतीऽयमपृथिवी । तद्यत्रैऽतच्चा-  
त्वालं खातं तत्सम्प्रति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्बहिष्पवमाने  
स्तूयमाने मनसोऽद्गृह्णीयात् ॥ ६ ॥ स यथोऽच्छ्रायम्प्रति यस्य  
प्रपद्येतैऽवमेवैतया देवतयेदममृतमभिपर्येति यत्राऽयमिदं तपती-  
ति ॥ ७ ॥ अथ होवाच—॥ ८, ९, ४ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

गोबलो वार्ष्णेः क एतमादित्यमर्हति समयैऽस्तुम् । दूराद्वा ए  
एतत् तपति न्यङ् । तेन वा एतम्पूर्वेण सामपथस्तदेव मनस

६. १ 'ऽति' अधिक २ त्वद् ३ अर्क ४ स ५ सत्यम्माहे ६ म  
७ चको ८ सत्यकीर्त ९ अ १० धृय ११ प्रत्यस्य १२ ऽततय ।

हृत्योऽपरिष्ठा देतस्यैऽतस्मिन्नमृते निदध्यादिति ॥ १ ॥ तद् उ  
 होवाच शाठ्यायानिस्समयैऽवाऽतदेनं कस्तद्वेद । यद्येता आपो वा  
 अभितो यद्वायुं वा एष उपह्वयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मै व्यूह-  
 तीति ॥ २ ॥ अथ होऽवाचोऽलुक्यो जानश्रुतेयो यत्र वा एष  
 एतत् तपत्येतदेवामृतम् । एतच्चेद्वै प्राप्नोति ततो मृत्युना पाप्मना  
 व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तारिक्षामिदमना-  
 तयनमवरेण ॥ ४ ॥ अथैऽतदेवाऽमृतम् । एतदेव मां यूयम्प्राप-  
 येष्यथ । एतदेवाहं नातिमन्य इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।  
 ष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्मा-  
 त्सम्पद्यते अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥५॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

ता एता अष्टौ देवताः । एतावदिदं सर्वम् । ते [.....]  
 गति ॥ १ ॥ स नैषु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यायावकाशं  
 ित् । मनसैनं निर्भजेत् ॥ २ ॥ तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते ।

“चत्वारि वाक् परिमिता पदानि  
 तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणाः ।

१ वाऽयं २ तद्, त ३ स्यै ४ अथो ५ ओम् ६ऽवाचा (!) उलुक्यो,  
 यो ७ अत् ८ परोण ९ अन्विलय १० त, प्रापिप् ११ यत् ।

गुहा त्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ति

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति” इति ॥३॥

तद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एव  
ते लोकाः ॥ ४ ॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीति । चतुर्भाग ह वै  
तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरेभिर्लोकैस्सर्देशास्य कृतम्भ-  
वति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथाश्मानमाखणामृत्वा लोष्टो विध्वं-  
सत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

प्रजापतिर्वा इबं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येदं जितं तव ॥१॥  
स ऐक्षतेत्यं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यद्व्यन्त इमां वाव ते  
जितिं जेष्यन्ति येऽयम्मम ॥ १ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेदम्पीळयानीति  
॥ ३ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत । तस्य पीळयन्नेकमेवाक्षरं ना-  
श्वनौत् पीळयितुमोमिति यदेतत् ॥ ४ ॥ एष उ ह वाव सरसः ।  
सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं रक्षम्पी-

७. १ तानि २ मो, ओम ३ गयन्ति ४ तानि ५ ओम् ६ कृत्वा  
७ लोष्टो ८ ओम् एवम विध्वंसते ९ स एषो... उपवदन्ति ।

१. ने २-दा, ३-क्रो ४. द्रुषं ।

ळयित्वा पनिधायोऽऽध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-  
 मन्वपश्चन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठा देवानाम एते ह्ये-  
 नमन्वपश्चन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥ ८ ॥  
 त इमं रसं देवा अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपष्यन्त् स तपो वा अभूदिति  
 ॥ ९ ॥ इममु वै अयं वेदम्मरीमृशित्वा तस्मिन्नेतदेवात्तरमपीळित-  
 ११ षविन्दन्नोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाव सरसः । तेनै-  
 १३ नम्प्रायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-  
 तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन चतपसाऽपीनेन  
 च वेदेन तामु एव जितिमजयन् याम्प्रजापतिरजयत् । त एते सर्व  
 १६ एव प्रजापतिमात्रा अयाश्म अयश्म इति ॥ १२ ॥ तस्मात्तप्यमा-  
 नस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यशः । स य एतदेवं वेदैवमेषा-  
 १९ ऽपीनेन वेदेन यजते । यदो याजयत्येवमेवाऽपीनेन वेदेन याजयति  
 ॥ १३ ॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एवं वेद । स  
 २३ य एवैनमुपवदति सार्तिमृच्छति ॥ १४ ॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

५. ह्येते ६. ओम् ७. क्षेत्रं ८. अद्, ऐच ९. तेभ्यप १०-इयंस्त-११  
 पीळितं, ता १२. वा १३. प्राय १४. ययाद् १५. तेन, ते एन,  
 तेनै १६. यत् १७- चन् १८. अम् याम् १९. ओम्. यजते यदो-वेदेन  
 २०. एव अवि २१. अस्ति २२. उपवदति उपवदति २३. अच्छति, अर्-

तदाहु<sup>१</sup>र्धदोवा<sup>१</sup> ओवा इति गीयते क्वा<sup>३</sup>र्गभवति, क सामेति ॥१॥ ओम्  
इति वै साम वागित्यृक् । ओमिति मनो वागिति वाक् । ओमिति  
प्राणो वागित्येव वाक् । ओमितीन्द्रो वागिति सर्वे देवाः । तदे-  
तदिन्द्रमेव सर्वे देवा अनुयन्ति ॥२॥ ओमित्येतदेवात्तरम् । एतेन  
वै संसवे परस्येन्द्रं वृज्जीत<sup>४</sup> । एतेन ह वै तद्वको दालभ्य आजके-  
शिनामिन्द्रं ववर्ज<sup>६</sup> । ओमित्येतेनैवाऽऽनिनाय<sup>९</sup> ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ ।  
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साग । ब्रह्म उ गायत्री । तद्ब्रह्माभिसम्प-  
द्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः  
कर्माक्षिति<sup>८</sup>रमृतं व्योमान्तो वाचः । बहुर्भूयस्सर्वं सर्वस्मा-  
दुत्तरं ज्योतिः । ऋतं सत्यं विज्ञानं<sup>९०</sup> विवाचनमप्रतिवाच्यम्<sup>९१</sup> । पूर्वं  
सर्वं सर्वा वाक् । सर्वमिदमपि धेनुः पिन्वते परागर्वाक् ॥५॥१॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

सा<sup>१</sup> पृथक्सलिलं कामदुघाक्षिति प्राणसाहितं चक्षुश्श्रोत्रं<sup>२</sup>  
वाक्प्रभृतम्मनसा व्याप्तं हृदयाग्रं<sup>३</sup> म्ब्राह्मणभक्तं मन्त्रशुभं वर्षपवित्रं

१. एवा । २. ओवात (= ओवा ३?) ३. ऋम् ।

४. अष्टवृज्-१५-शीन्-शिन-१६. ववर्ज ।

७. वनिनाय १८-इ; क्षिति । ९-हिर । १०. विजिज्ञा-११-अः ।

१ सा । २-क्षुश्रोत्र-३-दयोत्र-४. अकत्रम, अत्रम, भृत्रम ।



गोभग म्पृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणपरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं सहस्राक्षर-  
 मयुतधारममृतं दुहानां सर्वाणु इमाँलोकानभिविच्चरतीऽति ॥१॥  
 तदेतव सत्य मक्षरं यदोष इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अप्सु  
 पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा सूच्या पलाशानि  
 सन्तृणानि स्युरेवमेतेनाक्षरेणोमे लोकास्संतृणानाः ॥३॥  
 तदिदमिमान् अतिविध्य दशधा क्षराति शतधा सहस्रधाऽयुतधा  
 प्रयुतधा ( नियुतधा ) ऽर्बुदधा न्यर्बुदधा निखर्वधा पद्ममक्षिति-  
 ष्योमान्तः ॥४॥ यथौघो विष्यन्दमानः परः—परोवरीयान् भव-  
 त्येवमेवैतदक्षरम्परः—परोवरीयो भवति ॥५॥ ते हैते लोका  
 ऊर्ध्वा एव श्रिताः । इम एवं त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एवं  
 विद्वानुद्रायति स एवमेवैताँलोकानातिवहति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-  
 मुमादित्यम्मुख आधत्ते । एष ह वा एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य  
 सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितं न हाऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति  
 य एवं वेद ॥८॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान् व्रात्यान् पप्रच्छ ।

५. पर्यन्त-। ६-। ७ ओमिति । ८-प्सुः । ९ आम्, 'इदं' और  
 दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १० निर्बु-। ११ निखर्वाच, निखर्वदाच् ।  
 १२-नान् । १३ ओम् । परः परो । १४ तै । १५ तसि । १६ कण्व । १७ वै ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरिक्षे सूर्यः  
 पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीशिशियरे भूरिभाराः  
 किं स्वन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ९ ॥ ते ह  
 प्रत्यूचुस्

स्थूणाभिव दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरिक्षे  
 सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीशिशियरे भूरि-  
 भारास्सत्यम्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ १० ॥

ओमित्येतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति ॥ ११ ॥ ११ ॥ १० ॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

प्रजापतिः प्रजा असृजत । ता एनं सृष्ट्वा अन्नकाशिनीरभित-  
 स्समन्तम्पर्यविशन् ॥ १ ॥ ता अब्रवीत् किंकामास्स्थेति । अन्नाद्य-  
 कामा इत्यब्रुवन् ॥ २ ॥ सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नाद्यमसृष्टिं सामैव ।  
 तद्वः प्रयच्छानीति । तन्नः प्रयच्छेत्यब्रुवन् ॥ ३ ॥ सोऽब्रवीदिमान्वै  
 पशून् भूयिष्ठमुपजीवामः । एभ्यः प्रथमम्प्रदास्यामीति ॥ ४ ॥  
 तेभ्यो हिङ्गारम्प्रायच्छत् । तस्मात्पशवो हिङ्गुरिक्तो विजिज्ञास-

१८-मिश्र । १९ शिशियरे । २० अथित् ।

१. वा । २. पाम्- । ३ पृथ- । ४ -कृतो ।

मान्ना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्मध्येभ्यः । तस्माद्दु ते रतुवत्<sup>५</sup>  
 इवेदम्मे भविष्यत्त्वदो मे भविष्यतीऽति ॥६॥ आदिं वयोभ्यः ।  
 तस्मात् तान्याददानान्युपापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्यो  
 ऽमृतम् । तस्मात्तेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारशयेभ्यः पशुभ्यः ।  
 तस्मात्ते प्रतिहृतास्तन्तस्यमाना इव चरन्ति ॥९॥ १ । १.१ ॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

उपद्रवं गन्धर्वाप्सरोभ्यः<sup>१</sup> । तस्मात्त उपद्रवं गृह्णन्त इव  
 चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद्दु ते निधनसंस्थाः ॥२॥  
 तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छदेतमेवैभ्यस्तदादित्यम्प्रायच्छत् ॥३॥  
 स यदनुदितस्सहिङ्गारोऽर्थोदितः<sup>२</sup> प्रस्ताव आसंगवमादिर्माध्यन्दिन  
 उद्गीथोऽपराहणः प्रतिहारो यदुपास्तमयं लोहितायति स उपद्रवो  
 ऽस्तमित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्लोकैस्समः । तद्यदेश  
 सर्वैर्लोकैस्समस्तस्मादेश एव साम । स ह वै सामावित् स साम  
 वेद य एवं वेद ॥५॥ ते ऽब्रुवन् दूरे वा इदमस्मत् । तत्रेदं कुरु

४. स्तुवतेव । ६. प्रतिहृतास् । ७. तात् ( ? ) स् (!) यमाना;  
 तातास्यमाना ।

१-आपसरेभ्यः । २ अर्थोदित- । ३ आदित्यः । ४ द्विवार 'स सामवेद'  
 देता है ।

यत्रोपजीवामेति ॥६॥ तद्वत्तूनभ्यत्यनयत् । स बसन्तमेव हिङ्गार-  
मकरोद्ग्रीष्मप्रस्तावं वर्षामुद्गीथं शरदम्प्रतिहारं हेमन्तं निधनम् ।  
मासार्धमासावेव सप्तामावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि ।  
तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स  
पुरोवातमेव हिङ्गारमकरोत् ॥९॥ १ । १२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

जीमूतान् प्रस्तावं स्तनयित्नुमुद्गीथं विद्युत्प्रतिहारं वृष्टिं  
निधनम् । यद्वृष्टात्प्रजाश्रौषधयश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत्  
॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥२॥  
तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूष्येव हिङ्गारमकरोद्वचः प्रस्तावं  
सामान्युद्गीथं स्तोमम्प्रतिहारं छन्दो निधनम् । स्वाहाकारवषट्-  
कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव  
कुरु यत्रोपजीवामेति ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत् । स मन एव  
हिङ्गारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्प्राणमुद्गीथं चक्षुःप्रतिहारं श्रोत्रनिधनम्  
रेवश्चैव प्रजां च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन्नत्र वा एनत्तद-

५-म इति । ६ कर्- । ७ प्रस्तावः । वर्षा उद्गीथः, शरत्प्रतिहारः,  
ग्रोम शरदम्प्रतिहारम् ।

१. प्रस्तात्रैवम् । २-तिर् । ३सप्तम- । ४म इति । ५ अ-भ्यत्यत्यन-

कर्यत्रोपजीविष्याम इति ॥६॥ स विद्यादहमेव सामास्मि मय्येता  
देवता इति ॥७॥ १ । १.३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

न ह दूरे देवतस्स्यात् । यावद् वा आत्मना देवानुपास्ते  
तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव  
सामाऽस्मि मय्येतास्सर्वा देवता इत्येवं हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता  
भवन्ति ॥२॥ तदेतदेवश्रुत्साम । सर्वा ह वै देवताश्शृण्वन्त्येवं-  
विदम्पुरायाय साधवे । ता एनम्पुरायमेव साधु कारयन्ति ॥ ३ ॥  
स ह स्माऽऽह सुचित्तश्शैलनो यो यज्ञकामो मामेव स वृणीताम् ।  
तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवंविद्ं ह्युद्गायन्तं सर्वा देवता  
अनुसंतृप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा करिष्यन्ति यथैऽनं यज्ञ  
उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १.४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्तमाप्तः ।

—०—

देवा वै स्वर्गं लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना न  
तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते  
देवाः प्रजापतिमुपाधावन् स्वर्गं वै लोकं मौप्सिष्म । तं न शयाना

१ देवत । २ ओम् । ३ एस्म । ४ देवश्चैत् । देवश्चूत् । एवश्चूत् । ५-नं ।  
१-ऽऽशीना । २-न्त्यो । ३ उपाय-

नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचनकर्मणाऽऽपाम् ।  
 तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामेऽति ॥२॥ तानब्रवीत्  
 साम्नाऽनृचेन स्वर्गं लोकम्प्रयातेऽति । ते साम्नाऽनृचेन स्वर्गं  
 लोकम्प्रायन् ॥ ३ ॥ प्र वा इमे साम्नाऽगुरिति । तस्मात्प्रसाम  
 तस्माद्दु प्रसाम्यन्नमत्ति ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-  
 न्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गं लोकमजयन् ॥५॥  
 तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि  
 शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चत् । यदभ्यर्चत्ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥  
 १ । १.५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैऽवर्गं भवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥  
 अथैऽषामिमामसुरादिश्रियमविन्दन्त । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥  
 ते देवा अभवन् या वै नःशरीरभूदविदन्त तामसुरः । कथं न्वेषा-  
 मिमांश्रियम्पुनरेव ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽब्रुवन्नृच्येव साम गायामेति ।

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रधामे, प्रयामे । ६ लोकमप्रायत् । ७ इसके बाद कुछ गड़ बड़ है । ५ के पूर्व यह सब में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् ( त्ययन् ) । ते स्वर्गं लोकमजयन् (-अत्) । अथेऽमानि प्रजापतिर्...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ ओम् । ते स्वर्गं अजयन्, यहां अधिक है । १० ओम् । यद्..... । ११ ओम् । ता एव ।

१ आस्- । २ तद् । ३ एवा । ४ विन्दन्त । ५ अत् ।

ते पुनः प्रत्यादृत्यार्चं सामाऽगायन् । तेनाऽस्माल्लोकाद्-  
सुराननुदन्त ॥४॥ तद्वै माध्यन्दिने च सवने तृतीयसवने च  
नर्चोऽपराधोऽस्ति । स यत्ते ऋचि गायति तेनाऽस्माल्लोकाद्  
द्विपन्तम्भ्रातृव्यं नुदते । अथ यदमृतं देवतासु प्रातस्सवनं गायति  
वेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै सांज्ञेऽमां जितिमजयद्याऽस्ये  
ऽयं जितिस्ताम ११ । स स्वर्गं लोकमारोहत् १२ ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-  
मुपेत्याऽब्रुवन्स्मभ्यमपीऽदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-  
स्साम प्रायच्छत् १३ ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽकामयत  
वोढुम् ॥८॥ ते देवाः प्रजापतिमुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्साम प्रादा  
इदं वै नस्तस्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति १४ ॥९॥ तद्वै पाप्मना  
संसृजतेति । कोऽस्य पाप्मेति । ऋगिति । तदृचा समसृजन्  
॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्ह्यमाणमतिष्ठदिदं वै मा तत्पाप्मना सम-  
साद्गुरिति १५ ॥ सोऽब्रवीद्यस्त्वैतेन व्यावर्तयाद्ध्येव स पाप्मनावर्ताता  
इति ॥११॥ स य एतदृचा प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येवं १६ स  
पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

६-दुच्यत्य । ७ ऋत्-। ८-पराधो । ९-धि । १०-नृते । ११ तम ।  
१२ अर-। १३ न कामयते, न कामयते । १४ कामाय्-, सामय्, ।  
१५ संसृ- । १६ एव ।

तदाहुर्यदोवा ओवा इति गीयते कात्रर्भवति क सामेति ॥१॥  
 प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिरक्षरैः प्रस्तौति । अष्टाक्षरा गायत्री । अक्षरमक्षरं  
 व्यक्षरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री ॥२॥  
 तामेताम्प्रस्तावेनर्चमाप्त्वा या श्रीर्याऽपचितिर्यस्स्वर्गो<sup>२</sup> लोको यद्यशो  
 यदन्नाद्यं तान्यागायमान आस्ते ॥३॥ १।१.७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

प्रजापतिर्देवानसृजत । तान्<sup>१</sup> मृत्युः पाप्मान्वसृज्यत ॥१॥  
 ते देवा प्रजापतिमुपेसाब्रुवन् कस्माद्<sup>२</sup> नोऽसृष्ट्वा<sup>३</sup> मृत्युं चेन्नः पाप्मा-  
 नमन्ववस्रक्ष्यन्नासिथेति ॥२॥ तानब्रवीच्छन्दसि सम्भरत । तानि  
 यथायतनम्प्रविशत<sup>४</sup> ततो मृत्युना पाप्मना व्यावत्स्यथेति ॥३॥  
 वसवो गायत्रीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत्  
 ॥४॥ रुद्रास्त्रिण्डुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छाद-  
 यत् ॥५॥ आदिस्या जगतीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान्  
 साऽच्छादयत् ॥६॥ विश्वेदेवा अनुण्डुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् ।  
 तान् साऽच्छादयत् ॥७॥ तान् अस्यामृच्यस्वरायाम्मृत्युर्निरजा-

१. प्रस्तावेप्रस्तवेन । २-र्ग ।

१. ता, ताः । २ कस्मा । ३-ष्टा । ४-सृजन् । ५-शब्द  
 ६-वत्स्य, वत्स्य- । ७ च्छाद्, याम् ।



नाद्यथा मणौ मणिसूत्रम्परिपठयेद्देवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।  
 तान् स्वरे सतो न निरजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्वैत् ॥९॥  
 त ओमित्येतदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं त्रयीविद्या । यददो<sup>१</sup>  
 ऽमृतं तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥  
 एवमेवैवं विद्वान् ओमित्येतदेवाक्षरं समारूह्य यददो<sup>२</sup>ऽमृतं तपति  
 तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्ततेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-  
 यति ॥११॥ १।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:०:—

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य त्रय्येव विद्या हिङ्गारः ।  
 अग्निर्वायुरसावादिस एष प्रस्तावः । इम एव लोका आदिः ।  
 तेषु हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धा यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।  
 दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष प्रतिहारः । आपः प्रजा ओषधय  
 एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतन्निधनम् ॥२॥  
 तद्वैतदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदैतेन हास्य

८-बैद् । ९ नास्ति । १० ओ । ११-पेद् । १२ पदो, ओ ।

१-त्रै । २ वावायुर । ३ येषु । ४-ज्ञा ।

सर्वेणोद्गीतम्भवत्येतस्माद्देव सर्वस्मादावृश्च्यते य एवं विद्वांसमुप-  
वदति ॥३॥ १११-६॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत् । तद्देवाप्येतर्हि ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं<sup>१</sup>  
य एवाऽयम्पवत् एतदेवान्तरिक्षम् । एष ह वा अन्तरिक्षनाम् ॥२॥<sup>२</sup>  
एष उ एवैष कित्ततः तद्यथा काष्ठेन पलाशे विष्कब्धे स्यातामक्षेण  
वा चक्रावेवमैतेनेमौ लोकौ विष्कब्धौ ॥३॥ तस्मिन्निदं सर्वमन्तः ।  
तद्यदस्मिन्निदं सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् । अन्तर्यक्षं ह वै नामैतत् ।  
तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा मृताः प्रवद्धाः प्रलम्बे-  
रन्नेवं हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रवद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य  
साम्प्रस्तिस्त्र आगास्त्रीरयागीतानि षड्भूतयश्चतस्रः प्रतिष्ठा दश  
प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम् ॥६॥ तद्यास्तिस्त्र आगा इम  
एव ते लोकाः ॥७॥ अथ यानि (त्रीण्य्) आगीतान्यग्निर्वायुरसा

५-अस् । ६ आवृच्योते ।

१-रीक्ष- २ अधिक है । एष ह वा अन्तरीक्षम् । ३ एवम् ।

४ नास्ति । ५-क्षोना- ६ नवम् । ७ एतेन । ८ नास्ति । तद्.....

अन्तस्त्र । ९ नास्ति । १०-बन्द्- ११-नंस- १२ अगमाः । १३ एक-  
रैपम्, एकरूपम् । १४ तो ।

वादिष एतान्यागीतानि । न ह वै कांचनश्रियमपराध्नोति य<sup>१</sup>  
वेद ॥८॥ १।२०॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ याषड्विभूतय ऋतवस्ते ॥१॥ अथ याश्चतस्रः प्रति  
इमा एव ताश्चतस्रोदिशः ॥२॥ अथ ये दश प्रगा इम एव ते द  
प्राणाः ॥३॥ अथ यास्सप्त संस्था या एवैतास्सप्ताहोरात्राः प्रा<sup>१</sup>र्च  
र्वषट्कुर्वन्ति ता एव ताः ॥४॥ अथ यौ द्वौ स्तोभावहोरात्रे ए<sup>२</sup>  
ते ॥५॥ अथ यदेकरूपं कर्मैव तत् । कर्मणा हीदं सर्वं विक्रिय  
॥६॥ तस्यैतस्य साञ्जोदेवा आजिमायन् । स प्रजापतिर्हर<sup>३</sup>  
हिङ्गारमुदजयदाग्निस्तेजसा प्रस्तावं रूपेण बृहस्पतिरुद्गीथं स्वध<sup>४</sup>  
पितरः प्रतिहारं वीर्येणोन्द्रोनिधनम् ॥७॥ अथेतरे देवा अन्तरित  
इवासन् । त इन्द्रमब्रुवन् तव वै वयं स्मोऽनुन एतस्मिन् सामन्ना  
भजेति ॥८॥ तेभ्यस्स्वरम्प्रायच्छत् । तम्प्रजापतिरब्रवीत्कथेत्यमकः  
सर्वं वा एभ्यस्साम प्रादाः । एतावद्वाव साम यावान् स्वरः ऋग्व  
एषते स्वराद्भवतीति ॥९॥ सोऽब्रवीत् पुनर्वाअहमेपामेतंरसमादा  
स्य इति । तानब्रवीऽदुप मा गायत । अभि मा स्वरतेति । तथेति

१ नास्ति । सप्त.....एतास्त । २-आ । ३ वर्ष- । ४ वद  
५ रैर्षि । ६-सं । ७ तावव । ८-रम । ९ सवर्- । १० एषो, एषोम ।

॥१०॥ तमुपागायन् । तमध्यस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्त ॥११॥  
१।२१॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यथा मधुधाने<sup>१</sup> मधुनाळीभिर्मध्वासिञ्चादेवमेव तत्सामन्  
पुना रसमासिञ्चत् ॥१॥ तस्माद्दु ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एष  
यदुद्गाता । स यथा सावमीषां<sup>२</sup> रसमादत्त एवमेष तेषां रसमादत्ते  
॥२॥ कामं ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य हि तद्भवत्यथो ब्रह्म-  
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तद्दु वा आद्दुरूपैव गायेत् । दिशो ह्युपागा-  
यन् दिशांमेवं<sup>४</sup> सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य एवमे<sup>५</sup> मुख्याः  
प्राणा एत एवोद्गातारश्चोऽपगातारश्च । इमे ह त्रय उद्गातार इम  
उ चत्वार उपगातारः ॥५॥ तस्माद्दु चतुर एवोऽपगातृन् कुर्वीत ।  
तस्माद्दुहोऽपगातृन् प्रसभिष्टुशेदिशस्स्थश्रोत्रं मे माहिंसिष्टेति ॥६॥  
स यस्स रस आसीद्य एवायम्पवत् एष एव स रसः ॥७॥ स यथा  
मध्वाल्लोपमद्यादिति ह स्माह मुचित्तश्शैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-  
म्पूरयेत् । स एवोद्गातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥ १।२२

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

११-त्ता ।

१-धुवने । २ 'स' अधिक पदो । ३-यत् ॥ ४-शाम् । ५-एवै ।

६-व । ७-द्गा-,-तृन् । ८-तृन् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥

स यस्स आकाशो वागेव सा । तस्मादाकाशाद्वाग्बदति ॥२॥

तामेतां<sup>१</sup> वाचम्प्रजापतिरभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै रसः<sup>२</sup>

प्राणोदत्<sup>३</sup> । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ स इमाँ<sup>४</sup> लोकानभ्यपीळयत् ।

तेषामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । ता एवैता देवता अभवन्नाभि-

र्वायुरसावादिस इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळयत् ।

तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥

स त्रयीं<sup>६</sup> विद्यामभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणोदत् ।

ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्या-

हृतीरभ्यपीळयत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । तदेतद्-

ज्ञरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळयत् । तस्या-

भिपीळितस्य रसः प्राणोदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ यद्वेवाक्षरं ना-

णियत् तस्मादक्षरम् । अक्षरं ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति

१. एता वा । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम्.....रसम् (!)

णोदत्' अधिक है । ४. नास्ति । ५-आ । ६ नास्ति । स त्रयीम्

.....प्राणोदत् । ७-आ ।

१-वा ।

परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्धैतदेक ओमिति गायन्ति । तत्तथा न  
 गायेत् । ईश्वरो हैनदेतेन रसेनान्तर्धातोः<sup>१</sup> । अथो<sup>२</sup> द्वे<sup>३</sup> इवैवम्भवत्  
 ओमिति । ओ इत्यु<sup>४</sup> हैके गायन्ति । तदु<sup>५</sup> ह तन्न<sup>६</sup> गीतम् । नैव<sup>७</sup>  
 तथा गायेत् । ओ<sup>८</sup> इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥  
 तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं तर्पयति । अक्षरं<sup>९</sup> तृप्तं व्याहृती  
 स्तर्पयति । व्याहृतयस्तृप्तावेदाँस्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्प-  
 यन्ति । देवतास्तृप्ता लोकाँस्तर्पयन्ति । लोकास्तृप्ता अक्षरं तर्पयन्ति ।  
 अक्षरं तृप्तं वाचं<sup>१०</sup> तर्पयति । वाक्<sup>११</sup> तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः  
 प्रजास्तर्पयति । तृप्यति प्रजया पशुभिर्य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं  
 विद्वानुद्गायति<sup>१२</sup> ॥४॥ १।२४॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अयमेवेदमग्र<sup>१</sup> आकाश आसीत् स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स  
 यस्स आकाश आदिस एव स । एतस्मिन् ( ह्य ) उदिते<sup>२</sup> सर्व-  
 मिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मर्यामृतयोर्वै<sup>३</sup> तीराणि<sup>४</sup> समुद्र एव ।

२ या-। ३-ये । ४ द्वै, द्वै । ५ नास्ति । ६ नि-। ७ ने एव ।  
 ८ ओ । ९ अक्षरं.....वाचं तर्पयति यह पाठ नहीं । १०-यन्ति ।  
 ११ वाकस् । १२ गायति ।

१ ह्य ( १ ) । २ सुदिते । ३ वैर्व । ४ तरणी ।

तद्यत्समुद्रेण<sup>५</sup> परिगृहीतं तन्मृत्योराप्तमथ यत्परं तदमृतम् ॥३॥ स  
 यो ह स समुद्रो य एवायम्पवत एष एव स समुद्रः । एतं हि  
 संद्रवन्तं<sup>६</sup> सर्वाणि भूतान्यनुसंद्रवन्ति ॥४॥ तस्य द्यावापृथिवी एव  
 रोधसी । अथ यथा नद्यां<sup>१</sup> कंसानि वा प्रहीणानि<sup>१०</sup> स्युस्सरांसि वै-  
 व मस्यायम्पार्थिवस्समुद्रः ॥५॥ स एष पार एव समुद्रस्योदेति ।  
 स उद्यन्नेव वायोः पृष्ठ आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनु-  
 संचरति । अमृते प्रतिष्ठितः<sup>१२</sup> ॥६॥ तस्यैतत् त्रिवृद्रूपमृत्योरनाप्तं शुक्लं  
 कृष्णाम्पुरुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचोरूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या  
 सा वाग्मृक् सा । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तदपां  
 रूपमन्नस्य मनसोयजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो  
 यजुष्टत् ॥९॥ अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् ।  
 स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥१०॥ १।२५॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिवृच्छुक्लं कृष्णाम्पुरुषः ॥१॥  
 तद्यच्छुक्लं तद्वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या सा वाग्मृक् सा ।

५-गृह-। ६-द्रे-। ७ अनुद्-। ८-या । ९-याम् । १० कसा-  
 नि । ११ प्रहीणहीनि । १२ अधिक है 'सस्' स । १३ प्रतिष्ठितः ।  
 १४ वाग्म्य, वाग् । १५ अत् । १६ अन्नमस्य । १७ नास्ति, तद्याः-यः  
 पुरुषस् ॥ १-अत् । २ अधिक 'ऽकसा' ।

अथ योऽभिर्मृत्युस्सः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदपां रूपमन्नस्य मनसो  
 यजुषः । तथास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो यजुष्टत् ॥३॥  
 अथ यः पुरुषस्स प्राणास्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणा-  
 स्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैऽपोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणः ।  
 अथातः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स  
 यदेव विद्युतो विद्योतमानायै श्येतं रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृचो-  
 ऽग्नेर्मृत्योः ॥६॥ यदेव विद्युतस्संद्रवन्स्यै नीलं रूपम्भवति तदपां  
 रूपमन्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्स प्राणा-  
 स्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणास्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म  
 तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स हैषोऽमृतेन परिवृढो मृत्युमध्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथै-  
 ऽष एव पुरुषो योऽयं चक्षुषि । य आदिस्यै सोऽतिपुरुषः । यो  
 विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हास्यैते  
 जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चक्षुष्येषोऽनुरूपो नाम । अन्वद्ध होष

३-षो । स्त्र ( १ ) । ४-त् । ५ नास्ति । ६ श्येतं । ७-क्ष- । ८-वे ।  
 ९-आ ।

१-सी । २-यो । ३-षो, -वा, -व । ४-वज । ५ ह् ।



सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वाञ्चि<sup>६</sup> हैनं<sup>५</sup> सर्वाणि  
 रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदित्ये स प्रतिरूपः । प्रत्यङ् ह्येष  
 सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । प्रत्याञ्चि<sup>६</sup> हैनं सर्वाणि  
 रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युतिं स सर्वरूपः । सर्वाणि हेतस्मिन्<sup>९</sup>  
 रूपाणि । तं सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि हाऽस्मिन् रूपाणि<sup>९</sup>  
 भवन्ति ॥६॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य  
 एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२७॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकरसमाप्तः ।

— :०: —

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स  
 यस्त आकाश इन्द्र एव सः । स यस्त इन्द्र एष एव स य एष  
 एव तपति । स एष सप्त रश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् ॥२॥ तस्य वाङ्मयो  
 रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा या सा वागाग्निस्सः । स दशधा  
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधा<sup>२</sup> न्यर्बुदधा  
 निखर्बुधा<sup>३</sup> पद्ममत्तितिव्योमान्तः<sup>४</sup> ॥ ३ ॥ स एष एतस्य रश्मिर्वा-

६-वञ्चि, चङ्ङी, चं । ७ छेनम् । ८ प्रत्यं । ९ अधिक हे  
 रूपाणि, नास्ति-तं ..... रूपाणि ।

१ नास्ति । २ अर्- । ३ निखर्वाचं । ४-ति । ५-स, स्तोम-

भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च वदसेतस्यैव  
 रश्मिना वदति ॥४॥ अथ मनोमयो दक्षिणा<sup>१</sup> प्रतिष्ठितः । तद्य-  
 चन्मनश्चन्द्रमास्सः । स दशधा भवति ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिर्मनो<sup>१०</sup>  
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च मनुते एतस्यैव  
 रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः<sup>११</sup> प्रखड्<sup>१२</sup> प्रतिष्ठितः । तद्यत्तश्चक्षु-<sup>१३</sup>  
 रादित्यस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिश्चक्षु-<sup>१४</sup>  
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च पश्यसेतस्यैव  
 रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमय उदङ्<sup>१५</sup> प्रतिष्ठितः । तद्यत्तच्छ्रोत्रं  
 दिशस्ताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्श्रोत्र-  
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च शृणोसेतस्यैव  
 रश्मिना शृणोति ॥१०॥ १।२८॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ प्राणमय ऊर्ध्वः<sup>१</sup> प्रतिष्ठितः । स यस्स प्राणो वायुस्सः ।  
 स दशधा भवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणो भूत्वा सर्वास्वासु  
 प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च प्राणितसेतस्यैव रश्मिना प्राणिति

६ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षिणा । १० मन्वश ।  
 ११ चक्षुम- १२-य । १३ वस्थितः । १४ त, नास्ति । १५ प्रत्यवस्थितः ॥

१-स्थ- २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽसुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । स ह<sup>३</sup> स ईशानो नाम । स  
दशधा भवति ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरसुभूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु  
प्रसवस्थितः । स यः कश्चाऽसुमानेतस्यैव रश्मिनाऽसुमान् ॥४॥  
अथाऽक्षमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तदन्नमापस्ताः । स दशधा  
भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा  
निखर्वधा<sup>९</sup> पञ्चमक्षितिव्योमान्तः<sup>१</sup> ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरन्नभूत्वा  
सर्वास्वासु प्रजासु प्रसवस्थितः । स यः कश्चाश्चायेतस्यैव रश्मिना-  
श्नाति ॥६॥ स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते<sup>११</sup>  
यस्सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।  
योरोहिणामस्फुरद्ब्रवाहुर्धामारोहन्तं स जनाः स इंद्र इति<sup>१२</sup>  
॥७॥ यस्मत्तरश्मिरिति । सप्त हेत आदिस्य रश्मयः । वृषभ  
इति । एष हेवाऽऽसाम्प्रजानामृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवा<sup>१५</sup>  
स्यैषा ॥८॥ अवासृजत् सर्तवे सप्तसिन्धुनिति । सप्तहेतेसिन्धवः ।

३ स्थान खाली है 'स.....ई' । ४-वन्ति । ५ 'यत्' के पश्चात् 'तत्तदुद्' नाम पाठ है, 'तदन्नम्.....स' नहीं है । ६ अँदन्नम् ।  
७ तेदा. स्त । ८ निखर्वाच्च, निखर्वधाच्च । ९ वंम- । १० सामास्व्  
११ नास्ति तदेतद् ..... वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोह- । १३-हु ।  
१४-त । १५ मह्यै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ॥६॥

यो रौहिणामस्फुरद्वज्रबाहुरिति । एष (हि) रौहिणामस्फुरद्वज्रबाहुः

॥१०॥द्यामारोहन्त<sup>१६</sup> स जनास इन्द्र इति । एष हीन्द्रः ॥११॥ १२-६॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुदियुरिति हस्माऽऽह शाख्यायनि-  
रेवमेत आदिस्यस्य रश्मय एतमादिसं सर्वतोऽपियन्ति । स हैवं

विद्वानोमिसाददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादिसं सर्वतोऽप्येति ॥१॥

तदेतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं<sup>१७</sup> साम । अन्यतोद्वारं है<sup>१८</sup>ऽनदैक<sup>१९</sup> एवा-  
ऽभ्रङ्गमुपासते । अतोऽन्यथाविद्युः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद स

एवैतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विद्युत् । (यद्)

एतन्मण्डलं समन्तम्परिपतति तत्साम । अथ यत्परमतिभाति स

पुण्यकृत्यायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतद्भ्रातृव्यं<sup>१९</sup> साम ।

न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं

वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥५॥ १३०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान खाली है-हन्-वाला,-हत्तं ।

१ एवम् । २ तिप्रतिवियन्ति । ३ अनुष्- । ४ नास्ति । ५ नत, त ।  
६ नास्ति । ७ एताव, एता । ८ गम् । ९ एतो । १० विद्यु । ११-तृवि ॥

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽप्येतर्हि । स  
यस्य आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्रस्सामैवतत् ॥१॥ तस्यै-  
तस्य साम्न इयमेव प्राचीदिग्घङ्कार इयम्प्रस्ताव इयमादिरियमुद्गी-  
थोऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपद्रव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-  
विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यादिशि  
या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं हिङ्कारेणाभोति  
॥३॥ अथ यदक्षिणायां दिशि तत्सर्वं प्रस्तावेनाभोति ॥ ४ ॥ अथ  
यत्पृथ्वीच्यां दिशि तत्सर्वमादिनाभोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि  
तत्सर्वमुद्गीथेनाभोति ॥६॥ अथ यदमुष्यां दिशि तत्सर्वम्प्रतिहारेणा-  
भोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे तत्सर्वमुपद्रवेणाभोति ॥८॥ अथ  
यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं  
निधनेनाभोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽप्तमभवति सर्वं जितं न हा-  
ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्धकिञ्च  
किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्वतः कुरुते । तदे-  
तहचाऽभ्यनूच्यते ॥११॥ १।३१॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ दीर् । २-ईत् । ३ एत् । ४ 'मनुष्या' अधिक है । ५-वा ।  
६ यहां चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साथ ही प्रतिहारेणा  
'प्रस्तावेन' के स्थान में । ७ 'अव्यात्' अधिक है । ८ 'दक्षिणायांदिशि' ॥

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुत स्युः । नत्वा  
 वज्रिन्सदृसं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी इति ॥१॥  
 यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुतस्युरिति । यच्छतं द्यावस्स्युश्शत-  
 म्भूम्यस्ताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान् ॥२॥ नत्वा वज्रिन्सदृसं  
 सूर्या अन्विति । न ह्येतं सदृसं च न सूर्या अनु ॥३॥ न जातमष्ट  
 रोदसी इति । न ह्येतं जातं रोदन्ति । इमे ह वाव रोदसी ताभ्या-  
 मेष एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् ह्येवते अन्तः ॥४॥ स यस्स  
 आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष तपति ॥५॥  
 स एषोऽभ्राणयतिमुच्यमान एति । तद्यथैषोऽभ्राणयतिमुच्यमान  
 एषेवमेव स सर्वस्मात्पाप्मनोऽतिमुच्यमान एति य एवं वेदाथो  
 यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।३२॥

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

त्रिवृत्साम चतुष्पात् । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयम्प्रजापति-  
 स्तृतीयमन्नमेव चतुर्थः पादः ॥१॥ तद्यद्वै ब्रह्म स प्राणोऽथ य इन्द्र-

१ नास्ति । २-यां । ३ नास्ति । ४-यन् । ५ नास्ति, स—स ।  
 ६ स्थान खाली 'य' तक । ७-मानय, -यमानय ॥

श्रित्त-१

स्सा वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन  
 एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥  
 करंसेव वाचा नयति प्राणेन गमयति मनसा । तदेतन्निरुद्धं यन्मनः ।  
 तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-  
 देवतम् । चन्द्रमा एव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथ आप  
 एव चतुर्थः पादः । तद्धि प्रत्यक्षमन्नम् ॥५॥ ता वा एता देवता  
 अमावास्यां रात्रिं संयन्ति । चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादित्यम्प्र-  
 विशस्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्साम । स ह वै  
 सामचित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवतानामे-  
 कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिवृच्चतुष्पाद्रश्मयो  
 मण्डलम्पुरुषः । रश्मय एव हिङ्गारः । तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-  
 स्तायन्ते । मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स  
 एव चतुर्थः पादः ॥९॥ एवमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः ।  
 रश्मय एव हिङ्गारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त  
 स्स एव चतुर्थः पादः ॥१०॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि । तान्यष्टौ ।  
 अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रं साम ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माऽभि-  
 सम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनोपशव्यम् ॥११॥ १।३.३ ॥

एकादशोऽनुवाकैः प्रथमः खण्डः ।

अथाऽध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिवृच्चतुष्पाच्छुक्लं कृष्णाम्पुरुषः ।  
शुक्लमेव हिङ्गारः कृष्णाम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या इमा आपोऽन्तस्स  
एव चतुर्थः पादः ॥१॥ इदमादित्यस्यायनमिदं चन्द्रमसः ॥ चत्वारिमानि  
चत्वारिमानि । तान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम ब्रह्म उ गा-  
यत्री । तद्ब्रह्माभिसम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥२॥  
स योऽयम्पवते स एष एव प्रजापतिः । तद्वेव साम । तस्यायं देवो  
योऽयं चक्षुषि पुरुषः । स एष आहुतिमतिमसोत्क्रान्तः ॥३॥ अथ  
यावेतौ चन्द्रमाश्चादित्यश्च यावेतावप्सु दृश्येते एतावेतयोर्देवौ ॥४॥  
यद्वा इदमाहुर्देवानां देवा इत्येते ह ते । त एत आहुतिमतिमसो-  
त्क्रान्ताः ॥५॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान्ब्राह्मण्यन्पञ्च येभिर्वात  
इषितः प्रवाति ये ददन्ते पञ्च दिशस्समीचीः । य  
आहुतीरत्यमन्यन्त देवा अपां नेतारः कतमे त आ-  
सन्निति ॥६॥ ते ह प्रत्यूञ्जु रिमामेषाम्पृथिवीं वस्त एको-  
ऽन्तरिक्षम्पर्येको बभूव । दिवमेको ददते यो विधता  
विश्वा आशाः प्रतिरत्तन्त्यन्य इति ॥७॥ इमामेषाम्पृथिवीं

१-पाद- २ नास्ति । ३-यते । ४ एता उ । ५ तान् । ६ एभिर् ।  
७ दशस्, दश । ८-ईर । ९ इत्यम्- । १० पराङ् । ११-ईन्- । १२-धत्ता ।  
१३ अन्य ।



बल एक इत्यभिर्हसः ॥८॥ अन्तरिक्षम्पर्येको बभूवेति वायुर्ह सः ॥६॥

दिवमेको ददते यो विधत्ते<sup>१५</sup>ऽस्यादिसो ह सः ॥१०॥ विश्वा आशाः  
प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति  
चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सख्यो व्यूहोऽन्नाद्याय ॥११॥

१ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:o:—

अथैतस्साम । तदाहुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त  
एव हिङ्गारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्गुरिक्रतस्समुदायन्ति ॥२॥  
श्रीष्मः प्रस्तावः । अनिरुक्तो वै प्रस्तावोऽनिरुक्त ऋतूनां श्रीष्मः  
॥३॥ वर्षा उद्गीयः । उदिव वै वर्षं गायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः ।  
शरादे ह खलु वै भूयिष्ठाओषधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् ।  
नियनकृता इव वै हेमन्प्रजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः ।  
एतदन्वन्तस्संवत्सरः । तस्यैतावन्तौ यद्धेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु  
ग्रामस्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्भो-  
गान्पर्याहृतशये ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा अभिपर्यक्तं

१५ विधत्ते, विधत्ते । १५ अन्-,'न्-'-याया ।

१-करिर्कुतस्,-करिर्कुतस् । २ नास्ति । ३-तत् । ४ सवत्-  
। धी- । ५-यत्तः ।

एवमनन्तं साम । स य एवमेतदनन्तं साम वेदानन्ततामेव जर  
॥८॥ १।३५॥

द्वादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोवात एव हिङ्गारः । अथ

दश्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः ।

अथ यद्विद्योतते स प्रतिहारः । अथ यद्वर्षति तन्निधनम् ॥९॥

तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेदवर्षुको हास

पर्जन्यो भवति ॥१०॥ अथैतत् पुरुषे साम । तस्यायमेव हिङ्गारो

ऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥११॥ तदेतत्पुरु

साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽध्व एव प्रजया पशुभिरा

रोहन्नेति ॥१२॥ य उ एनत्प्रसग्वेद ये प्रसञ्चो लोकास्ताञ्जयति

तस्यायमेव हिङ्गारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम्

ये प्रसञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥१३॥ य उ एनत्तिर्यग्वेद ये तिर्यञ्चो

लोकास्ताञ्जयति । तस्य लोमैव हिङ्गारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीथोऽस्थि

प्रतिहारो मज्जानिधनम् ॥१४॥ तस्य त्रीण्याविर्गायति प्रस्तावम्प्रतिहार

७ ऽनन्ताम् ।

२-षक्-। २-थो । ३ प्रजा । ४-नं । ५ नास्ति । ६ एन, एनं

७-थुंच्-, 'म' अधिक है । ८ लाक्-। ९ हिंकारं ॥

निधनम् । तस्मात्पुरुषस्य प्रीणयस्थीन्याविर्दन्ताश्च द्रुयाश्चनखाः ।  
 ये तिर्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥७॥ य उ एनत्संयग्वेद ये सम्यञ्चो  
 लोकास्ताञ्जयति । तस्य मन एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथ-  
 श्चक्षुः प्रतिहार इश्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जति ॥८॥  
 अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदिस  
 उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥९॥ तदेतद्देवतासु साम ।  
 स य एवमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सल्लोकतां जयति ॥१०॥

१३६॥

द्वादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्यैतास्ति स्र आगा आग्नेयैकेन्द्रैका वैश्वदेव्येका ॥१॥ सा या  
 मन्द्रा साऽऽग्नेयी । तया प्रातस्सवनस्योद्देयम् । आग्नेयं वै प्रातस्स-  
 वनमाग्नेयोऽयं लोकः । स्वयाऽऽगया प्रातस्सवनस्योऽद्रायत्यृध्रोतीमं  
 लोकम् ॥२॥ अथ या घोषियुपब्दिमती सैऽऽन्द्री । तया माध्य-  
 न्दिनस्य सवनस्योद्देयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवनं मैन्द्रोऽसौ  
 लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्देयत्यृध्रोसमुलोकम्  
 ॥३॥ अथ या वीङ्गयन्निव प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तया

१ ऐक्य- २ ऽऽन्द्र । ३ नास्ति, सा.....ऽद् । ४ मँनधी ।  
 नास्ति अथ.....लोकम् । ५-अब्दी-के स्त्रिये स्थानं खाली है ।  
 -००दिन । ८-तिऽम् । ९ या, 'घोषियु', भी खिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्देयम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-  
लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्यृध्रोतीमन्तरालोकम्  
॥४॥ अथो उच्चा खल्वाहु रेक्यैवाऽऽगयोद्देयं यदेवास्य मध्यं वाच  
इति । तद्यथा वैवाचा व्यायच्छमान उद्गायति तदेवास्य मध्यं वाचः ।  
<sup>११</sup>तथा वा एतथा वाचा सर्वा वाच उपगच्छति । अव्यासिक्तामेकस्थां  
श्रियमृध्नोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा बार्हस्पत्या । स  
यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स <sup>१२</sup>तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै  
ब्रह्मवर्चसमृध्नोति तथा ह ब्रह्मवर्चसी भवति ॥६॥ अथ ह चैकिताने-  
नेय एकस्यैव साम्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं <sup>१३</sup>गेयम् ।  
<sup>१४</sup>तत् साम्न एवा प्रतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।  
तद्वै प्राणमृध्नोति । तथा ह सर्वमायुरेति ॥७॥ १।३।७॥

द्वादशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं चैकितानेयमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहिहि  
साम दालभ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः  
किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै लोमेऽस्यै-

१०-यन्ति । ११ ताया । १२ स, नास्ति । १३ 'वै गायत्रम्'  
नीचे से ले के अधिक लिखा है । १४ 'साम्नस' अधिक है ॥

१ तश् । २ उज्जिहि । ३ सोमे ।

तदेवैतत्प्रत्युपष्टमः । तस्मादु ये न एतदुपावादिपुर्लोमशानीऽवतेषां  
 श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गातारस्म इति ॥३॥ अथ  
 ह राजा जैवलिर्गलूनसमार्त्ताकायणं शामूल पर्णाभ्यामुत्थितम्पप्र-  
 च्छर्चाऽऽगातां शालावसा ३ साम्ना ३ इति ॥४॥ नैव राजन्नृचेति  
 होवाच न साम्नेऽति । तद्युयं तर्हि सर्व एव पणार्या भविष्यथ य  
 एवं विद्वांसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवक्ष्यदृचा च साम्ना चाऽऽगामे-  
 ति धीतेन वै तद्या तयाम्नाऽमलाकारणेनाऽऽगतेऽति हैनास्तदवक्ष्यत ।  
 तद् तदुवाच स्वरेण चैव हिङ्कारेण चाऽऽगामेति ॥६॥ १।३८॥

द्वादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अथ ह ससाधिवाकश्चेन्नरथिस्सखयज्ञम्पौलुषितमुवाच प्राचीन-  
 योगेति मम चैद्वै त्वं साम विद्वान् साम्नाऽऽत्विज्यं करिष्यसि नैव  
 तर्हि पुनर्दीक्षामभिध्यातासीति । मुहुर्दीक्षीं ह्यासं ॥१॥ स होवाच  
 यो वै साम्नाश्श्रियं विद्वान्साम्नाऽऽत्विज्यं करोति श्रीमानेव भवति ।  
 मनो वाव साम्नाश्श्रीरिति ॥२॥ यो वै साम्नाः प्रतिष्ठां विद्वान्साम्ना-  
 ऽऽत्विज्यं करोति प्रसेव तिष्ठति । वाग्वाव साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४-उपाशु- ५-पुल्ल । ६-तार । ७ गळूनसम, गुळिनसम ।

८-त । ९ पणार्या । १० च आगमे ॥

१ मच्छ । २-क्षी । ३ आ ।

यो वै साम्नस्सुवर्णं विद्वान् साम्नाऽऽत्विज्यं करोत्यध्यस्य गृहे  
 सुवर्णं गम्यते । प्राणो वाच साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नो  
 ऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽत्विज्यं करोत्यपचितिमानेव भवति । चक्षु-  
 र्वाच साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्ना-  
 ऽऽत्विज्यं करोति श्रुतिमानेव भवति । श्रोत्रं वाच साम्नश्श्रुतिरिति  
 ॥६॥ १।३-६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

चत्वारिवाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा  
 ये मनीषिणः । गुहा<sup>१</sup> त्रीणि<sup>२</sup> निहिता<sup>३</sup> नैऽङ्गयन्ति  
 तुरीयं<sup>४</sup> वाचो मनुष्या वदन्तीऽति ॥ १ ॥

वागेव साम । वाचा हि साम गायति । वागेवोऽक्थम् । वाचा  
 ह्युक्थं शंसति । वागेव यजुः । वाचा हि यजुरनुवर्तते ॥२॥ तद्य-  
 त्किंचाऽर्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम् । अथ यदन्यत्र ब्रह्मोपदिश्यते ।  
 नैव हि तेनाऽऽत्विज्यं करोति । परोक्षेणैव<sup>५</sup> तु कृतम्भवति ॥३॥

४-हो ।

१-हानि । २-हितानी । ३ नास्ति । ४-क्त्- । ५ वाचं । ६ ने ।

७ नास्ति ।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः पादश्श्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः  
 पादः ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति । यच्चक्षुषा प्रश्याति  
 तद्वाचा वदति । यच्छ्रोत्रेण शृणोति तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-  
 तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति तस्माद्वागेव साम । स ह वै सामवित्स  
 साम वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राणा एवाऽसुः ।  
 एषु हीदं सर्वमसूतेति ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तेन हैतेनाऽसुना देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-  
 वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥  
 तदाहुर्यदमुनेदं सर्वं जीवति कस्साम्नोऽसुरिति । प्राण इति ब्रूयात् ।  
 प्राणो ह वाच साम्नोऽसुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वागु  
 प्राणो प्रतिष्ठिता । तावेतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ । प्रतिष्ठिति  
 य एवं वेद ॥३॥ तदेतद्वचाऽभ्यनूच्यते—

ए चतुर्थः अधिक है । ६ स्वाद् । १० शृणोति । ११ ऽहिसम-  
 १२-शा । १३ 'असूते' के परे 'एषु हीदं सर्वं सूतेऽति' सब से  
 खिखा है ( नास्ति 'ति) ॥

१-न्तीऽति । २ यदा । ३ येने । ४ 'इदं' अधिक है । ५-ये ।  
 ६ मन्यस्-१७ प्रतिष्ठितः ।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता  
स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदिति-  
र्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति । एषा वै द्यौरेषाऽन्तरिक्षम्  
॥५॥ अदितिर्माता स पिता स पुत्र इति । एषा वै मातैषा पितैषा  
पुत्रः ॥६॥ विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना इति । ये देवा असुरेभ्यः  
पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावादित्ये पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो  
विद्युति योऽप्सु योऽधमक्षन्तरेष एव ते । तदैषैव ॥७॥ अदिति-  
र्जातमदितिर्जनित्वमिति । एषा ह्येव जातमेषा जनित्वम् ॥८॥ १।४१॥

त्रयोदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । अयोदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

:०:

आरुणिर्ह वासिष्ठं चैकितानेयम्ब्रह्मचर्यमुपेयाय । तं होत्राचा-  
ऽऽजानासि सौम्य गौतम यदिदं वयं चैकितानेयास्सामैवोपास्महे ।  
कां त्वं देवतामुपास्स इति । सामैव भगवन्त इति होऽवाच ॥१॥  
तं ह पप्रच्छ यदग्नौ तद्देव्या इति । ज्योतिर्वापतत्तस्य साम्नो यद्दयं

८-रीक्षस्- । ६ नास्ति, अदितिर्माता..... अदितिरन्तरिक्षम् ।  
१०-वै । ११-षो । १२-वैर् । १३-षम् । १४ इतिर्, इति ॥  
१ (वाचा) आज । २ यं । ३-माह-इति । ४-स नर्ही । ५-वृत् । ६ ता ।



सामोऽपास्मह इति ॥२॥ यत्पृथिव्यां तद्वेत्या३ इति । प्रतिष्ठा वा  
 एषा तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्या३  
 इति । शान्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह इति ॥४॥  
 यदन्तरिक्षे तद्वेत्या३ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्रयं  
 सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वायौ तद्वेत्या३ इति । श्रीर्वा एषा तस्य  
 साम्नो यद्रयं सामोऽपास्मह इति ॥६॥ यदिक्षु तद्वेत्या३ इति ।  
 व्याप्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह इति ॥७॥ यदिवि  
 तद्वेत्या३ इति । विभूतिर्वा एषा तस्य साम्नो यद् वयं सामोपा-  
 स्मह इति ॥८॥ १।४२॥

चतुर्विंशोऽनुवाकेः प्रथमः खण्डः ।

यदादित्ये तद्वेत्या३ इति । तेजो वा एतत्तस्य साम्नो यद्रयं  
 सामोपास्मह इति ॥१॥ यश्वन्द्रमसि तद्वेत्या३ इति । भा वा एषा  
 तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह इति ॥२॥ यन्नक्षत्रेषु तद्वेत्या३  
 इति । प्रजा वा एषा तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह इति ॥३॥  
 यदग्ने तद्वेत्या३ इति । रेतो वा एतत्तस्य साम्नो यद्रयं सामोपास्मह

७ हाशिया पर लिखा है । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद् ..... इति ।  
 १० नास्ति साम्नो ..... ऽप । ११-हा । १२ नास्ति ष ..... स्मह ॥  
 १ नास्ति । २ प्रजा । ३ नास्ति, 'एतत्' में 'तत्' ।

इति ॥४॥ यत्पशुषु तद्वेत्या ३ इति । यशो वा एतत्तस्य साम्नो  
यद्वयं सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्यच्चि तद्वेत्या ३ इति । स्तोमो वा एष  
तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥६॥ यद्यजुषि तद्वेत्या ३ इति ।  
कर्म वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ अथ किं  
उपास्स इति । अत्तरमिति । कतमत्तदत्तरमिति । यत्तरन्नाऽत्तीयते-  
ति । कतमत्तत् तरन्नाऽत्तीयतेति । इन्द्र इति ॥८॥ कतमस्स इन्द्र  
इति । योऽत्तत्रमत इति । कतमस्स योऽत्तत्रमत इति । इयं देवतेति  
होवाच ॥९॥ योऽयं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिः । (स)  
समः पृथिव्या सम आकोशन समोदिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष  
ारो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यः ॥१०॥ सय  
एतदेवं वेद ज्योतिष्मान् प्रतिष्ठावाञ्छान्तिमानात्मवाञ्छीमान्  
याप्तिमान् विभूतिमांस्तेजस्वी भावान् प्रज्ञावात्रेतस्वी यशस्वी  
गोमवान् कर्मवान्तरवानिन्द्रियवान् सामन्वीभवति ॥११॥ तद्वे-  
दचाऽभ्यनूच्यते ॥१२॥ १।४३॥

चतुर्दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

४ नास्ति । ५ वो । ६ स्ते- । ७.....'स्स' के लिये स्थान छोड़ा है ।  
८ । ९ अक्षरं । १०-त्त । ११ इन्द्रमत । १२ स्तो । १३ नास्ति ।  
-ई । १४ दिव्य- । १५-सीतव्यं । १७-वी । १८ स्तोमान् ।  
उद् ॥

रूपं-रूपम्प्रति रूपोबभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय ।  
 इन्द्रोमायाभिः पुरुरूपं ईयते युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश ॥  
 इति ॥१॥ रूपं-रूपम्प्रतिरूपो बभूवेति । रूपं-रूपं ह्येष प्रतिरूपो बभूव  
 ॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणाय हाऽस्यैतद्रूपम्  
 ॥३॥ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूपं ईयते इति । मायाभिर्ह्येष एतत्पुरु  
 रूपं ईयते ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादशेति । सहस्रं हेत आदि-  
 क्षस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्तैरिदं सर्वं हरति । तद्यदैतैरिदं  
 सर्वं हरति तस्माद्धरयः ॥५॥ रूपं रूपम्मघवा बोभवीति  
 मायाः कृण्वानः परितन्वं स्वाम् । त्रिर्यद्विवः  
 परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति ॥६॥  
 रूपं-रूपम्मघवा बोभवीतीति । रूपं-रूपं ह्येष मघवा बोभवीति  
 ॥७॥ मायाः कृण्वानः परि तन्वं स्वामिति । मायाभिर्ह्येष एतत्स्वां  
 तन्वं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यद्विवः परिमुहूर्तमागादिति । त्रिर्ह वा  
 एष एतस्य मुहूर्तस्येवाम्पृथिवीं समन्तः पर्येतीमाः प्रजासंसंचक्षणाः  
 ॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति । अनृतुपा ह्येष एतदृतावा ॥१०॥ ११४४  
 चतुर्दशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

१ पुरुरूपम्, पुरुरूपं । २ रम्यते । ३-णा । ४-पम् । ५-पम् । ६ रमीयते ।  
 ७ नास्ति, हरयश्च...तेऽस्य । ८ 'म' अधिक है । ९ मुहूर्त-१० नास्ति,  
 इति । ११ पुनः लिखा है 'रूपंरूपं...वीचीति (१) । १२ कृष्वा ।  
 १३-मि । १४ श । १५ नास्ति । १६ अति । १७ नृत- । १८ ऋता ॥

तद्ध पृथुर्वैन्यो दिव्यान्व्रासान्पप्रच्छ—

इन्द्रमुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म सामं प्राणां व्यानम् ।

मनो वा चक्षुरपानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधावदन्ती-

ति ॥१॥ ते प्रत्यूचुः—

ऋषय एते मन्त्रकृतः पुराजाः पुनराजायन्ते वेदानां गुप्त्यैकम् ।

ते च विद्रांसो वैन्य तददन्ति समानम्पुरुषम्बहुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां ह वा तद्देवतां त्रय्यां विद्यायामिमां समानामभ्येकं आप-  
यन्ति नैके । यो ह वावैतदेवं वेद स एवैतां देवतां सम्प्रति वेद

॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति

नैवोद्गातुश्चोपगातूणां च विज्ञायते । इत एवोऽऽध्वैस्स्वरुदेति ।

स उपरि मूर्ध्नी लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन

पाप्मा न्यङ्गः परिशेक्ष्यत इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः

परिशिष्यते ॥५॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन

भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥१४५॥

चतुर्दशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्दशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१-इदम् । २ नो । ३ त्रय्यां, त्रय्यां । ४ इमां । ५-ता । ६ न्य । ७ ह्ये ।

८ य वै । ९-तृन्- । १० 'ति' अधिक करो । ११ ध्वी । १२ स्वर । १३ परिषे-

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत् बहुस्त्याम्प्रजोयेय  
 मूमानं गच्छेयमिति ॥१॥ स षोडशधाऽऽत्मानं व्यकुरुत् भद्रं च  
 समाप्तिश्चाऽऽभूतिश्च सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं  
 । श्रीश्च यशश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्चमहीया च रसश्च  
 २॥ तद्यद्द्रुद्रं हृदयमस्य तत् । ततस्संवत्सरमसृजत् । तदस्य  
 वत्सरोऽनूपतिष्ठते ॥३॥ समाप्तिः कर्मास्य तत् । कर्मणा हि  
 माम्नोति । तत् ऋतूनसृजत् । तदस्यर्तवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आ-  
 तैरन्नमस्य तत् । ( तच् ) चतुर्धा भवति । ततो मासानर्धमा-  
 नहोरात्रायुषसोऽसृजत् । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्रायु-  
 षोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूती रेतोऽस्य तद् । रेतसो हि सम्भव-  
 ॥६॥ १।४६॥

पञ्चदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तत्तश्चन्द्रमसमसृजत् । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्स  
 षः प्रतिरूपः ॥१॥ भूतम्प्राणोऽस्य सः । ततो वायुमसृजत् ।  
 य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानोऽस्य सः । ततः पशूनसृजत् ।  
 प पशवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं व्यानोऽस्य सः । ततः प्रजा

१ चे । २-याँ । ३-अन्ते । ४ 'त' अधिक है । ५ तद् ।  
 ॥ ६ अचर्धा, अर्धा । ७-ति, -ता, त ।  
 १-त । २-या । ३ रूपशवो ।

असृजत । तदस्य प्रजा अनूपतिष्ठन्ते । तस्मादासु प्रजासु रूपाण्य-  
धिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तव । ततो दिशोऽसृजत ।  
तदस्य दिशोऽनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्ता अपरिमिताः । अपरिमितमिव हि  
मनः ॥५॥ श्रीर्वागस्य सा । ततस्समुद्रमसृजत । तदस्य समुद्रो-  
ऽनूपतिष्ठते ॥६॥ यशस्तपोऽस्य तव । ततोऽग्निमसृजत । तदस्या-  
ऽग्निरनूपतिष्ठते । तस्मात्स मथितादिव सन्तप्तादिव जायते ॥७॥  
नाम चक्षुरस्य तव ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तत आदिस्यमसृजत । तदस्यादिशोऽनूपतिष्ठते ॥१॥ अग्र-  
म्पूर्धास्य सः । ततो दिवमसृजत । तदस्य द्यौरनूपतिष्ठते ॥२॥  
सजाता अङ्गान्यस्य तानि । अङ्गैर्हि सह जायते । ततो वनस्पती-  
नसृजत । तदस्य वनस्पतयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ पयो लोमान्यस्य  
तानि । तत ओषधीरसृजत । तदस्यौषधयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ महीया  
मांसान्यस्य तानि । मांसैर्हि सह महीयते । ततो वयस्यसृजत ।  
तदस्य वयस्यनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्तानि प्रपतिष्णुनि । प्रपतिष्णुनी-

४-यते । ५ नास्ति, ततो ..... तस्मात् । ६ नास्ति । ७ तस्या ।  
८ मथितामिदं, मथितितादं ॥

१ अंगान्य, अंगहान्य, अङ्गैर्हि । २ ता । ३ गैर् । ४ नास्ति,  
पयो ..... अनूपतिष्ठन्ते । ५ मभिया, महिया । ६ त ।

ऽव महामाँसानि ॥५॥ रसो मज्जाऽस्य सः । ततः पृथिवीमसृजत ।  
 तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठत ॥६॥ स हैवं षोडशधाऽऽत्मानं विकृत  
 सार्धं समैव । तद्यत्सार्धं समैतत्<sup>१०</sup> तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष  
 हिरण्यमयः पुरुष उदतिष्ठत्प्रजानां जनिता<sup>११</sup> ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवाः प्रजापतिमुपाधावाञ्जयामाऽसु-  
 रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न वै मां यूयं वित्थं नाऽसुराः । यद्वै मां यूयं  
 विधात<sup>२</sup> ततो वै यूयमेव स्यात् पराऽसुराभवेयुरिति ॥२॥ तद्वै  
 ब्रूहीऽस्यब्रुवन । सोऽब्रवीत्पुरुषः प्रजापतिस्सामेति मोऽपाद्भवम् ।  
 ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽसुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तम्पुरुषः  
 प्रजापतिस्सामेऽत्युपासत । ततो वै देवा अभवन् पराऽसुराः । स  
 यो हैवं विद्वान्पुरुषः प्रजापतिस्सामेऽत्युपास्ते भवत्यात्मना पराऽस्य  
 द्विषन् भ्रातृव्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

७ महीम्-१ ८ मज्जया । ९-न्ते । १० समैतत्; तत्पञ्चात्,  
 'तद्यत्सार्धं समैतत्' (१) पुनः है । ११ जयिता ॥

१-एत । २-यत् । ३-हिं ॥

देवा वै विजिग्याना<sup>१</sup> अब्रुवन्दितीयं करवामहै । माऽद्वितीया  
 भूमेति । तेऽब्रुवन् सामैव<sup>२</sup> द्वितीयं करवामहै । सामैव नो द्वितीय-  
 मस्त्विति ॥१॥ त इमे द्यावापृथिवी अब्रुवन् समेतं साम प्रजनयत-  
 मिति ॥२॥ सोऽसावस्या<sup>३</sup> अवीभत्सत । सोऽब्रवीद्बहु वा एतस्यां  
 किं च किं च कुर्वन्सधिष्ठीवन्सधिचरन्सध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता  
 वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति ।  
 शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया  
 शतं मुनोति ॥४॥ ते कुम्भ्यामब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं तत-  
 स्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते कुम्भ्या-  
 ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्भ्यां शतं मुनोति ॥५॥ ते नाराशंसीमब्रु-  
 वन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति ।  
 तथेति । ते नाराशंस्याऽपुनन् । तस्मादुत नाराशंस्या शतं मुनोति  
 ॥६॥ ते रैभीमब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतस-  
 निस्स्या इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या शतं

१ विजिग्याना । २ वा । ३ सा । ४ अवीभत्- । ५-धिष्- ।  
 ६-नि-नी । ७-म्भ- । ८ '५' पुनः । लिखा है । ९ तेन । १० शतनी ।  
 ११-भिम् । १२ त ॥



सुनोति ॥७॥ सेयम्पूता । अथाऽसुमब्रवीद्बहु वै किं च किं च  
 पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति ॥८॥ १।५०॥

षांडशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स ऐलवेनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता  
 ऋचः पूतानि यजूषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥१॥  
 ते समेस्य साम प्राजनयताम् । तद्यत्समेस्य साम प्राजनयतां तत्सा-  
 म्प्रसामत्वम् ॥२॥ तदिदं साम सृष्टमद उत्क्रम्य लेलायदतिष्ठत् ।  
 तस्य सर्वे देवा ममत्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽब्रुवन्धीद-  
 म्भजामहा इति । तस्य विभागे न समपादयन् । तान्प्रजापतिर-  
 ब्रवीदपेत । मम वा एतत् । अहमेव वो विभक्ष्यामीति ॥४॥  
 सोऽग्निमब्रवीत्त्वं वै मे ज्येष्ठः पुत्राणामसि । त्वम्प्रथमो वृणीष्वेति  
 ॥५॥ सोऽब्रवीन्मन्द्रं साम्नो वृणोऽन्नाद्यमिति । स य एतद्वायाद-  
 १०  
 ग्नाद एव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्वायन्त-  
 ११ १२  
 ॥६॥ अथेन्द्रमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्र-

१३ तम् ।

१-लव्-। ऐलवेनां । २-वाम । ३ प्रज्-। ४-अत् । ५ मे ।  
 'धीश्वर' के लिये स्थान खाली है, वीदां । ७ भविष्य-। ८ अियम् ।  
 गायत्राच्च । १० इतीमान् । ११ अथ । १२ सोमम् ।

<sup>१३</sup>वीदुग्रं <sup>१४</sup>साम्नो <sup>१५</sup>वृणे <sup>१६</sup>श्रियमिति । स य एतद्गायाच्छ्रीमानेव सोऽस-  
 न्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥८॥  
 अथ सोममब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥९॥ सोऽब्रवीद्रुगु <sup>१५</sup>साम्नो वृणे  
 प्रियमिति । स य एतद्गायात्प्रिय एव स कीर्तेः प्रियश्चक्षुषः प्रिय-  
 स्सर्वेषामसन् मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुप-  
 वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥११॥  
<sup>१७</sup>सोऽब्रवीत्क्रौञ्चं <sup>१८</sup>साम्नो वृणे ब्रह्मवर्चसमिति । स य एतद्गायाद्ब्रह्म-  
 वर्चस्येव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्गायन्तमुप-  
 वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

षोडशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

अथ विश्वान्देवानब्रवीच्चूयमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽब्रुवन्वैश्व-  
 देवं साम्नो वृणीमहे प्रजननमिति । स य एतद्गायात्प्रजावानेव सोऽस-  
 दस्मानु <sup>१</sup>देवानामृच्छाद्य एवं <sup>२</sup>विद्राँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥२॥  
 अथ पशूनब्रवीच्चूयमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वायुर्वा अस्माक-  
 मीशे । स एव नो वरिष्यत इति । ते वायुश्च पशवश्चाब्रुवन्निरुक्तं साम्नो

१३ वल्गु । १४ प्रियम् । १५ नास्ति, स य ..... सोऽब्रवीद्-६ में ।  
 १६ गायत्रच् । १७ नास्ति । १८ लुङ्- ।

१ 'म' अधिक है । २ नीचे से 'च स वायुं' अधिक लेता है ।  
 ३ वरिष्ठ । ४ अनिर- ।

वृणीमहे पशव्यमिति । स य एतद्गायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च  
 स वायुं च देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥४॥  
 अथ प्रजापतिरब्रवीदहमनुवरिष्य इति ॥५॥ सोऽब्रवीदनिरुक्तं  
 साम्नो वृणे स्वर्ग्यमिति । स य एतद्गायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्मामु  
 स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्गायन्तमुपवदादिति ॥६॥  
 अथ वरुणमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्रवीद्यद्वो न कश्चना-  
 ऽवृत्त तद्दहम्परिहरिष्य इति । किमिति । अंध्वान्तं साम्नो वृणेऽपश-  
 व्यमिति । स य एतद्गायादपशुरेव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य  
 एतद्गायादिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ गीतागीतानि साम्नः ।  
 इमान्यु ह वै सप्तगीतानि । अथेयमेव वारुणयागाऽगीता ॥९॥ स  
 यां इ कां चैवं विद्वानेतासां सप्तानामागानां गायति गीतमेवास्य  
 भवत्येतानु कामान्नाध्नोति य एतासु कामाः । अथेसामेव वारुणी-  
 मार्गा न गायेत् ॥१०॥ १।५२॥

षोडशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षोडशोऽनुवाकसमाप्तः ।

—:०:—

५-युष् । ६ 'इति' तक शेष नहीं लिखा । ७-ति । ८ स्वर्गम् ।  
 ९-समुत् । १०-वृण्य-क-, यत् । ११-अपञ्चमात्म, अपञ्चमात्म । १२  
 पशु- । १३-अच्छाद्य । १४-य, स्थ । १५-य । १६-कामा । १७-नीरुध-,  
 निर्धुधेति ॥

द्वयं वावेदमग्र आसीत्सच्चैवासच्च ॥१॥ तयोर्यत् सत्  
 तत्साम तन्मनस्स प्राणः । अथ यदसत्सर्कसा वाक् सोऽपानः ॥२॥  
 तद्यन्मनश्चप्राणश्च तत्समानम् । अथ या वाक् चापानश्च तत्समानम् ।  
 इदमायतनम्मनश्च प्राणश्चेदमायतनं वाक् चापानश्च । तस्मात्पुमा-  
 न्दक्षिणतो योषामुपशेते ॥३॥ सेयमृगस्मिन् सामन् मिथुनमै-  
 च्छत । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा  
 अहममोऽस्मीति ॥४॥ तद्यत्सा चाऽमश्चतत् सामाऽभवत्  
 तत्साम्नस्सामत्वम् ॥५॥ तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा  
 वै मम त्वमस्यन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दा-  
 मि येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति । सा वै पुनीष्वेत्यब्रवीत् ।  
 अपृता वा असीति ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रा वदन्ति तेन ।  
 साऽब्रवीत्क्वेदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां  
 जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यौहत । तस्मादेषाधीरेव  
 प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीष्वेत्यब्रवीत् । साऽपुनीत गाथया  
 साऽपुनीत कुम्ब्यया साऽपुनीत नाराशस्या साऽपुनीत पुराणेति-

१ म्यक-अस्यदद्य भवितेऽति, (अस्त्य) भवितेति । २-ना ।

३ उपवशेते । ४-म । ५ सम्भवेत् । यम् । ६ 'वा' अधिक है । ७ प्रा,  
 रिप्रा । ८ त्वे । ९ त्यद् । १०-म्भ-, 'वा' अधिक है ।

हासेन साऽपुनीत यदिदमादाय नाऽऽगायन्ति तेन ॥१॥ साऽब्र-  
वीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां  
जीवनं वा एतद्रविष्यतीति । तथेति । तत्पत्यौहत् । तस्मादेषा  
धीर्वैव प्रजानां जीवनम्बेव ॥१०॥ पुनीष्वैवेत्यब्रवीत् ॥११॥ १॥१५३॥

सप्तदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा मधुनाऽपुनीत । तस्माद्भुत ब्रह्मचारी मधु नाऽश्रीयाद्वेदस्य  
पसाव इति । कामं ह त्वाचार्यदत्तमश्रीयात् ॥१॥ अथर्क सामा-  
ब्रवीद्भु वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स  
भरण्डकेष्णोनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः  
पूतानि यजूषिं पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥२॥ ताभ्यां  
सदो मिथुनाय पर्यश्रयन् । तस्माद्दुपवसथीयां रात्रिं सदसि न  
शयीत् । अत्र होतावृक्सामे उपवसथीयां रात्रिं सदसि सम्भवतः ।  
स यथा श्रेय स उपद्रष्टैवं हि शश्वदीश्वरोऽनुलब्धः पराभवितोः  
॥३॥ अथो आहुरुद्रातुर्मुखे सम्भवतः । उद्रातुरेव मुखं नैत्ते-

११ इमम् । १२ मादायना, आदायना ॥

१. सारे पद का पुनर्लेख है । २ स ' कामम् ' के स्थान में ।  
मा सर्वत्र है । ३ हरण्डकेष्णोना, भरण्ड, भरण्डकोच्छोना । ४-वन् ।  
५-धीयात्, -शीयाम् । ६-ई । ७ यीत्, येत् । ८-ध- । ९ अद् ।  
१० अनुलब्ध, अननुलब्ध- ।

वेति ॥४॥ तदु वा आहुः काममेवोद्गतुर्मुखमीक्षेत । उपवस्थीयामे-  
 वैतां रात्रिं सदसि न शयीत । अत्र खेवैतावृक्सामे उपवस्थीयां<sup>१२</sup>  
 रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहाऽमोऽहम-<sup>१३</sup>  
 स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम् । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-<sup>१४</sup>  
 नयावहै । एहि सम्भवावहा इति ॥६॥ तां सम्भवंन्नत्यरिच्यत<sup>१६</sup>  
 सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विराड् भूत्वा प्रजनयानेति ।  
 तथेति ॥७॥ तौ विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । हिङ्कारश्चाऽऽहात्रश्च<sup>१७</sup>  
 प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं  
 च षट्कारश्चैव<sup>१८</sup> विराड् भूत्वा प्राजनयताम् । ते अमुमजनयतां<sup>१९</sup>  
 योऽसौ तपति । ते व्यद्ववताम्<sup>२०</sup> ॥८॥ १।५४॥

सप्तदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

मध्यभूरेन्मध्यभूरेदिति । तस्मादाहुर्मधुपुत्र इति ॥१॥  
 तस्मादुतस्त्रियो मधु नाऽश्नन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः  
 ॥२॥ तदयं तृचोऽनूदश्रयत । इयमेव गायत्र्यन्तरिक्षं त्रिष्टुबसौ  
 जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्ठात्सामाऽभ्याहितं तपति ।

११ न । १२-थी- । १३ 'रण' अधिक है । १४-प्र- । १५ संभवत ।  
 १६ आत्यरिच्यते । १७-है- । १८ च । एवम् । १९ प्रज- ।  
 २० व्यद्वपताम्, भ्यद्ववताम्, व्यद्वपताम् (?) ॥

१-आ । २-इदम् । ३-ईत्- ।

सोऽध्रुव इवासीदलेलायदिव । स नोर्ध्वोऽतपत् ॥४॥ स देवा-  
 नब्रवीदुन्मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् ।  
 मामिह हृहेतेति ॥५॥ तथेति । तमुदगायन् । तमेतदत्राऽहहन् ।  
 तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानां श्रीः ॥६॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।  
 स नार्वाङ्गतपत् ॥७॥ स ऋषीनब्रवीदनु मा गायतेति । किं  
 ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हृहेतेति ॥८॥ तथेति ।  
 तमन्वगायन् । तमेतदत्राऽहहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां  
 श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाङ्क तपति । स न तिर्यङ् अतपत् ॥१०॥  
 स गन्धर्वाप्सरसोऽब्रवीदामा गायतेति । किं ततस्स्यादिति ।  
 श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हृहेतेति ॥११॥ तथेति । तमागायन् ।  
 तमेतदत्राऽहहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां  
 श्रीः ॥१२॥ तत एतत् तिर्यङ्क तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि  
 त्रीणि साम्न उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागायोद्गायाम  
 एतदुद्गीतम् । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-  
 म्नस्तदागीतम् । एतानि होव त्रीणि साम्नः ॥१४॥ १५५॥

सप्तदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । सप्तदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

०:

४ अ-ध्र- ५ हुंहेते । ६ उदगात् । ७-हत् । ८ तप- ९ तिर्यङ्क ।  
 १० त । ११ तिर्यङ्क । १२ आगयो, आगेयो- १३-यम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिरूर्मिमस्कन्दत् ।  
 ततो हिरण्मयौ कुक्ष्यौ<sup>२</sup> समभवतां ते एवर्कसामे<sup>३</sup> ॥१॥ सेयमृगिदं<sup>४</sup>  
 सामाऽभ्यप्लवत्<sup>५</sup> । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् ।  
 अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्सा चाऽमश्च तत्सास्नस्सामत्वम् ॥२॥  
 तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र  
 मिथुनमिच्छस्वोति ॥३॥ सा पराप्लवत्<sup>६</sup> मिथुनमिच्छमाना । सा  
 समास्सहस्रं सप्ततीः पर्यप्लवत् ॥४॥ तदेष श्लोकः—

स्त्री स्मैवाऽग्रे संचरतीच्छन्तीः सलिले पतिम् ।

समास्सहस्रं सप्तती स्ततोऽजायत पश्यत, इति ॥५॥

असौ वा आदित्यः पश्यतः<sup>७</sup> । एष एव तदजायत । एतेन  
 हि पश्यति ॥६॥ साऽविच्चा<sup>११</sup> न्यप्लवत् । साऽब्रवीन्न<sup>१२</sup> वै तं विन्दामि  
 येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ॥७॥ सा वै द्वितीयामिच्छ-  
 स्वत्यब्रवीन्न<sup>१३</sup> वै मैकोऽद्यस्यसीति । सा द्वितीयां<sup>१४</sup> विच्चा<sup>१५</sup> न्यप्लवत्  
 ॥८॥ ( तृतीयाम् ) इच्छस्वैत्यब्रवीन्नो<sup>१६</sup> वाव मा-द्रे<sup>१७</sup> उद्यस्यथ  
 इति । सा तृतीयां<sup>१८</sup> विच्चा<sup>१९</sup> न्यप्लवत् । सोऽब्रवीदत्र वै मोऽद्यस्यथेति<sup>२०</sup>

१-द । २ कुक्ष्यौ । ३ येप । ४ कसामे । ५ ह्यप्ल- । ६ परपरा- ।  
 ७ सप्ती । ८-ति । ९ पश्यतः । १० तम । ११ पित्वा । १२ नास्ति  
 साऽभ्यप्लवत् । १३-यम् । १४ वै । १५ वा । १६ स्थान छोड़ा  
 हुआ है, ध्वे । १७ अत्र- । १८-स्यसी ।



॥६॥ स यदेकयाऽग्रे समवदत् तस्मादेकर्चे<sup>१९</sup> साम । अथ यद्वे अपा-  
 सेषत्तस्माद्द्वयोर्न कुर्वन्ति । अथ यत् तिष्ठभिस्समपादयत् तस्माद्दु<sup>२०</sup>  
 त्चेसाम ॥१०॥ ता अब्रवीत्पुनीध्वंन पूता वै स्थेति ॥११॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा गायत्री गाथयाऽपुनीत नाराशंस्यात्रिष्टुब्रैभ्या जगती ।  
 भीमम्बत<sup>२</sup> मलमपावधिषतेति । तस्माद्भीमलाधियो वा एताः । धियो  
 वा इमा मलमपावधिषतेति<sup>३</sup> । तस्माद्दु भीमलाः । तस्माद्दु गायतां<sup>४</sup>  
 नाऽश्रीयात् । मलेन हेते जीवन्ति ॥१॥ अथर्के<sup>५</sup> सामाऽब्रवीद्ब्रु वै  
 किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स ऊर्ध्वगणेना-  
 ऽपुनीत ॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि  
 यजूषि<sup>६</sup> पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥३॥ ताभ्यां  
 दिशो मिथुनाय पर्यौहत् । तां सम्भविष्यन्नह्यताऽमोऽहमस्मि सा<sup>१०</sup>  
 त्वं सा त्वमस्यमोऽहमिति ॥४॥ ताभेतदुभयतो वाचाऽस्वरिच्यत<sup>१३</sup>  
 हिङ्गारेण पुरस्तावस्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्ठात् । अतितिस्रौ<sup>१४</sup>  
 ब्राह्मणायनीस्सद्दशी रिच्यते य एवं वेद ॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

१६-पद्-। २०-त्रिस्त-। २१-सम्प-॥

१-स्योत् । २-व । ३-थे । ४-ता । ५-स्त्री-। ६-र्के । ७-तानी ।

८-ता । ९-नूक्त-। १०-व्यन्त् । ११-अवचयत्, अह्वयन्त । १२-साम  
 १३-व । १४-त्यरुच्यते ।

<sup>१५</sup>रुध्वंशूषोऽद्रवत् (प्राणास्) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा <sup>१६</sup>अद्रवन् ॥६॥  
 सोऽसावादित्यस्स एष एव उदगिरेव गी चन्द्रमा एव थम् ।  
 सामान्येव उदच्च एव गी यजूष्येव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-  
<sup>१७</sup>ऽध्यात्मम् । प्राणा एव उद्गागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं  
 चाऽध्यात्मं चोद्गीथः <sup>१८</sup>॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं  
 चोद्गीथं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्माद् एव सर्वस्मादा-  
<sup>१९</sup>वृश्च्यते य एवं विद्राँसमुपवदाति ॥९॥ १।५७॥

अष्टादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादित्यमगासीरिति  
 ह वा एतत्पृच्छन्ति <sup>२</sup>॥१॥ एतं ह वा एतं नृत्या <sup>३</sup>विद्यया गायन्ति ।  
 यथा वीणागायिनो गापयेयुरेवम् ॥२॥ स एष हृदः <sup>४</sup>कामानाम्पुर्णो  
 यन्मनः । तस्यैषा कुल्या यद्वाक् <sup>५</sup>॥३॥ तद्यथा वा अपो <sup>६</sup>हृदात्कु-  
 ल्ययोऽपरामुपनयन्सेवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोद्गाता यजमानम् <sup>७</sup>  
 यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्गातारं दक्षिणाभिराराधयति <sup>८</sup>

१५ चू-। १६ द्र-। १७ ऽद्वा-। १८ गीथ-। १९-गीथ-।  
 २० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सी । २ प्रच्छन्त्य । ३ नृत्या । ४-गायिनो, गायथ-। ५ हृद्-।  
 ६ कुल्-। ७ यत् । ८ वात् । ९-त्र । १० अदो । ११-यन्त्य, -यन्ते,  
 -यन्त्य । १२-ना । १३ दक्षिणोभि । १४ राध-।

त्तं सा कुल्योऽप्रधावति । यं उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-  
 हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः<sup>१५</sup> प्रति<sup>१६</sup>श्चैव प्रतिग्रहश्च । तद्रूममिति वै<sup>१७</sup>  
 प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्मनसाऽऽत्मने । तथा ह सर्वे<sup>१८</sup>  
 न प्रयच्छति ॥६॥ तद्यदिदं सम्भवतौ रेतोऽसिच्यत<sup>१९</sup> तदशयत्<sup>२०</sup> ।  
 यथा हिरण्यमविकृतं<sup>२१</sup> लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममत्विन  
 आसन्मम ममेति । तेऽब्रुवन्वीदं करवामहा इति । तेऽब्रुवञ्छ्रेयो वा<sup>२२</sup>  
 इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनद्विकरवामहा इति ॥८॥ तदात्मभिरेव  
 च्यकुर्वत । तेषां वायुरेव हिङ्गार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-  
 स्सोमबृहस्पती उदगीथोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः<sup>२३</sup>  
 प्रजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम्<sup>२४</sup> ।  
 अस्य सर्वाभिर्देवताभिस्तुतम्भवाति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स  
 सर्वाभ्यो देवताभ्य आहृश्यते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरु<sup>१</sup>जगामाऽभिप्रतारिणं कान्त-  
 सेनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं ययाच ॥१॥ अथ हास्य वै प्रपद्य<sup>२</sup> पुरो-

१५ अधः । १६ प्रतिश । १७ धुं- । १८ आत्- । १९ सिध्य- ।  
 २० दश- । २१ अपि- अपित्तं । २२ था । २३ सोमबृ-ह । २४ हिरण्य ॥  
 १ कू- , आरैन् । २ एक में यहाँ हि समाप्ति है । ३-य ।

हितोऽन्ते निषसाद् शौनकः । तं हाऽनामन्व्य मधुपर्कम्पौ ॥२॥  
 तं होवाच किं विद्वान्नो दालभ्याऽनामन्व्य मधुपर्कम्पिबसीति ।  
 सामवैर्यम्प्रपद्येति होवाच ॥३॥ तं ह तत्रैव पप्रच्छ यद्वा यौ  
 तद्रेत्याइति । हिङ्गारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदग्नौ तद्रेत्याइ-  
 इति । प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्रेत्याइति ।  
 आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमवृहस्पत्योस्तद्रेत्याइति । उद्-  
 गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्रेत्याइति । प्रतिहारो  
 वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु तद्रेत्याइति । उपद्रवो  
 वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्रेत्याइति । निधनं वा  
 अस्य तदिति होवाच । आर्षियं वा अस्य तद्वन्धुता वा अस्य  
 सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानपा मधुपर्कमिति  
 ॥११॥ अथ हेतरः पप्रच्छ किं देवसं सामवैर्यम्प्रपद्येति । यद्देवसा-  
 षु स्तुवत इति होवाच तद्देवसमिति ॥१२॥ तदेतत् साध्वेव  
 मत्युक्तम् । व्याप्तिर्वा अस्यैषेति होवाच ब्रूह्वेवेति । मेदं ते नमो-  
 ऽकर्मेति होवाच । मैव नोऽतिप्राचीरिति ॥१३॥ स होवाचाऽप्रक्ष्यं

४-मन्त्रः । ५ सामवैर्या, ' र ' रहित । ६ तत् । ७ सोमाब्-  
 ८ ' द-' का पुनर्लेख । ९ नास्ति । १० अव्य । ११-वत्या ।  
 १२ सामवैर्या । १३-उत्तम ।

वाव त्वा देवतामप्रक्षयं वाव त्वा देवतायै देवताः । वाग्देवसं साम  
 वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोषधय ओषधीनामापः ।  
 तदेतद्द<sup>१४</sup>भ्यो जातं सामाऽप्सु प्रतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५-६॥

अष्टादशेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवा मनसोदगायन् । तदेषामसुरा  
 अभिदु<sup>२</sup>स पाप्मना समसृजन् । तस्माद्बहु किं च किं च मनसा  
 ध्यायति । पुरयं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोदगायन् ।  
 तां तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च किं च वाचा वदति । सत्यं  
 चैनया वदसन्तं च ॥२॥ ते चक्षुषोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन्  
 तस्माद्बहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यस  
 दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु  
 के च किं च श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं  
 ॥४॥ तेऽपानेनोदगायन् । तं तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च  
 के चाऽपानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥५॥  
 प्राणेनोदगायन् । अथासुरा आद्रवँस्तथा करिष्याम इति  
 न्यमाभाः ॥६॥ स यथाऽश्मानमृत्वा लोष्टो विध्वँसेतैवमेवाऽसुरा

१४ भ्यो ।

१ ज्ञाय- २-द्रक्ष्य अथवा-द्रत्य । ३-सृज- ४ व । ५ कूर-  
 स्य । ७ वै । ८ नास्ति । ९-गात् ।

व्यध्वँसन्तं<sup>१०</sup> । स एषोऽश्माऽऽखणं<sup>११</sup> यत्प्राणः ॥७॥ स यथाऽश्मान-  
राखणमृत्वा<sup>१२</sup> लोष्टो विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रो-  
समुपवदति ॥८॥ १।६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्तमासः ।

[ इति प्रथमोऽध्यायः । ]

:०:

---

१० सन्ते, षन्ता । ११-णो । १२ आणोम ।

## अथ द्वितीयोऽध्यायः । ]

देवानां वै षडुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च  
 चाऽपानश्च प्राणश्च ॥१॥ तेऽधियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहे  
 पहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गलोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्  
 द्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव  
 वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥  
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स  
 ॥४॥ तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम् मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।  
 द्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स  
 मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवे-  
 ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति  
 । स पाप्मा ॥७॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाव नोऽयम् मृत्युं न  
 नमसवाक्षीव । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषो-  
 दीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्मन आगायदथ य  
 कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव  
 । पापम्पश्यति ( स एव स पाप्मा ) ॥१०॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव

२ 'य' अधिक है । ३-त्यु । ४ ब्रवीन् । ५ न्व । ६ अक्षत्यच्- । ७-मान्- ।

नोऽयन्मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति  
 ॥१.१॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण शृणोति  
 तदात्मन आगायदथ य इतरे कामारतान्देवेभ्यः ॥१.२॥ तत्पाप्मा-  
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा  
 ॥१.३॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयम मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।  
 अपानेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१.४॥ तेऽपानेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ।  
 स यदेवाऽपानेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामा-  
 स्तान्देवेभ्यः ॥१.५॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं  
 गन्धमपानिति स एव स पाप्मा ॥१.६॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽय-  
 न्मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१.७॥  
 ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन प्राणिति तदात्मन  
 आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१.८॥ तत्पाप्मानाऽन्वसृज्यत ।  
 न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापमपश्यति न  
 पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥१.९॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य  
 पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् । अपहस्य हैव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं  
 लोकमेति य एवं वेद ॥२.०॥ २।१॥

प्रथमेऽनु गके प्रथमः खण्डः ।



मा या सा वागासीत्सोऽग्निरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्मन  
 र स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चक्षुरासीत् स  
 प्रोऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् ।  
 वविश्वेदेवाः ॥४॥ अथ यस्सोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् ।  
 वाचो बृहस्यै पतिस्तस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्स प्राण  
 स प्रजापतिरभवत् । स एष पुत्री प्रजावानुद्गीयो यः प्राणः ।  
 खर एव प्रजाः । प्रजावान्भवति य एवं वेद ॥६॥ तंहैतमेके  
 वि गायन्ति प्राणा ३ प्राणा ३ प्राणा ३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥  
 वाच शाक्यायनिस्तत एतमर्हति प्रसक्तं गातुम् । यद्वाच  
 करोति तदेतदेवाऽस्य कृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत  
 न्नोरेव प्रजातिः । स यद्विद्धुरोसभ्येव तेन क्रन्दति । अथ  
 सैव तेन पृथते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति ।  
 हुद्रायति रेत एव तेन सिक्तं सम्भावयति । अथ यत्प्राति-  
 रेत एव तेन सम्भूतम्प्रवर्धयति । अथ यदुपद्रवति रेत एव  
 ङ्गं विकरोति । अथ यन्निधनमुपैति रेत एव तेन विकृतम्प्रज-

१ यत् । २ अतम, अथ । ३ कुर्वति । ४ ए । ५-भेव-, नास्ति  
 रथ म्प्रतिहरति ।

नयति । सैषर्कसान्नोः<sup>१</sup> प्रजातिः ॥६॥ स य एवमेतामृक्सान्नोः  
प्रजातिं वेद प्र हैनमृक्सामनी जनयतः ॥१०॥ २२॥

प्रथमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:—

एष एवेदमग्र आसीद्य<sup>१</sup> एष तपति । स एष सर्वेषाम्भूतानां<sup>२</sup>  
तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामत् ॥१॥ सोऽक्रामयतै-  
कमेवाऽत्तरं स्वादु मृदु<sup>३</sup> देवानां वनामेति<sup>४</sup> ॥२॥ स तपोऽतप्यतं ।  
स तपस्तप्सैकमेवाऽत्तरमभवत् ॥३॥ तं देवाश्चर्षयश्चोपसमैप्सन् ।  
अथैषोऽसुरान्भूतहनोऽसृजतैतस्य पाप्मनोऽनन्वागमाय ॥४॥ तं  
वाचोपसमैप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचम्पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्ता वाक् । सखं च ह्येनया वदसन्तं च ॥५॥ तम्म-  
नसोपसमैप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्तम्मनः[ः]स् । पुरयं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥  
तं चक्षुषोपसमैप्सन् । ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्यादत्त ।  
तस्मात्पर्यादत्तं चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

६ सान्नोः, कसान्नोः ।

१ स । २-षा । ३ मृदु । ४ नास्ति । ५ पति । ६ पेवा ।

७ ' उदेवानाम् ' पूर्व से पुनः है । ८ पर्य्यत्तं ।

तं श्रोत्रेणोपसमैप्सन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।  
 तस्मात्पर्यात्तं श्रोत्रम् । श्रवणीयं चेनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥८॥  
 तमपानेनोपसमैप्सन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।  
 तस्मात्पर्यात्तोऽपानः । सुरभि च ह्येनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥९॥  
 तन्प्राणेनोपसमैप्सन् । तन्प्राणेनोपसमाप्नुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा  
 भूतहन् आद्रवन्मोहयिष्याम इति मन्यमानाः ॥११॥ स यथा-  
 ऽदमान्मृत्वा लोष्टो विध्वंसतैवमेवाऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽदमा-  
 ऽऽखणो यत्प्राणः ॥१२॥ स यथाऽदमान्मारुणमृत्वा लोष्टो  
 विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्वांसमुपवदति ॥१३॥ २।३॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्प्राणः । एष हीदं सर्वं वशेकुरुते  
 ॥१॥ वशी भवति वशे स्वान्कुरुते य एवं वेद । अस्य हासावग्रे  
 दीप्यते३ अमुष्य वासः ॥२॥ तं हेतुमुद्गीथं शाक्यायनिराचष्टे वशी  
 दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा ह वा अस्य कीर्तिर्भवति य एवं वेद ॥३॥  
 आभूतिरिति कारीरादयः प्राणं वा अनुप्रजाः पशव आभवन्ति ।  
 स य एवमेतमाभूतिरित्बुपास्त एवप्राणेन प्रजया पशुभिर्भवति ॥४॥

६ पर्याप्त, पथ्याप्त ।

१ एषां त हृदं सर्वं वशेकुरुते ऐसा पाठ देते हैं । २-शो ।  
 ३ ऽमुष्य-१ ४ अतः ।

रुन्भूतिरिति सात्ययज्ञयः । प्राणं वा अनुप्रजाः पशवस्सम्भवन्ति ।  
 स य एवमेतं रुन्भूतिरित्युपास्ते समे [व] प्राणेन प्रजया पशुभि-  
 र्भजति ॥१॥ प्रभूतिरिति शैत्राः<sup>६</sup> । प्राणं वा अनुप्रजाः पशवः  
 प्रभवन्ति । स य एवमेतन्भूतिरित्युपास्ते प्रैव प्राणेन<sup>७</sup> प्रजया  
 पशुभिर्भवति ॥६॥ भूतिरिति भाल्लविनः । प्राणं वा अनुप्रजाः  
 पशवो भवन्ति । स य एवमेतन्भूतिरित्युपास्ते भगत्येव प्राणेन  
 प्रजया पशुभिः ॥७॥ अररोधोऽनवरुद्ध इति पार्ष्णाशैलनः ।  
 एष ह्यन्यमपरुणादि<sup>१०</sup> नैतमन्यः । एष ह वाऽस्य द्विषन्तम्भ्रातृव्यम-  
 परुणादि य एवं वेद ॥८॥१॥ ॥

द्विर्तायेऽनुवाके द्विर्तायः खण्डः ।

एकवीर इत्यारुणोयः<sup>१</sup> । एको ह्येव वीरो यत्प्राणः । आ हा  
 ऽस्यैको वीरो वायवाञ्जायते य एवं वेद ॥१॥ एकपुत्र इति चैकितानेयः ।  
 एको ह्येव पुत्रो यत्प्राणः ॥२॥ स उ एव द्विपुत्र इति । द्वौ हि  
 प्राणापानौ ॥३॥ स उ एव त्रिपुत्र इति । त्रयो हि प्राणोऽपानो  
 व्यानः ॥४॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति । चत्वारो हि प्राणोऽपानो

५-भूर । ६ शक्ति- ७ 'प्रजया' अधिक है । ८ भूर । ९ अ-रोद्धा ।  
 १०-णद्वि । ११ से । १२-त । १३-बन्- ।

१-ह । २-त्य । ३-णय, 'दकं' के स्थान में सर्वत्र 'एका' । ४-य ।  
 ५-द्विष-

व्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति । पञ्च हि प्राणोऽपानो  
 व्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षट्पुत्र इति । षड् हि प्राणो-  
 ऽपानो व्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति  
 सप्त हीमे शीर्षण्याः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वात्रिंशच्चौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति । सप्त-  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वात्रिंशच्चौ नाभ्यां दशमः ॥१०॥ स उ एव  
 बहुपुत्र इति । एतस्य हीयं सर्वाः प्रजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं  
 विद्वान्सः पूर्वब्राह्मणाः कामागार्थिन आहुः कति ते पुत्रानागास्याम  
 इति ॥१२॥ २॥ २॥ ५॥

द्विर्तायेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

स यदि ब्रूयादेकस्मिन् आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वानेकस्मिन्मनसा  
 ध्यायेत् । एको हि प्राणः । एकोहाऽस्याऽऽजायते ॥१॥ स यदि  
 ब्रूयाद्द्वौ म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् ।  
 द्वौ हि प्राणापानौ द्वौ हेवाऽस्याऽऽजायते ॥२॥ स यदि ब्रूयात्त्रिन्म आ-  
 गायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्स्त्रीन्मनसा ध्यायेत् । त्रयो हि प्राणो

६-ना । ७-अभि । ८-आं । ९-वसुपुत्र । १०-यम, दयम् ।  
 ११-मन ॥

१ एक- । २ त्रयो । ३ 'व्यानः' अधिक है । ४ 'स हेवाऽस्याऽऽजा-  
 यन्ते' अधिक है । ५ मन ।

ऽपानोव्यानः । त्रयो हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि ब्रूयाच्चतुरो म  
 आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वाँश्चतुरो मनसा ध्यायेत् । चत्वारो  
 हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानः । चत्वारो हैवास्याऽऽजायन्ते ॥४॥  
 स यदि ब्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्पञ्चमनसा  
 ध्यायेत् । पञ्चहिप्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवानः । पञ्च हैवाऽस्या  
 ऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि ब्रूयात् षण्णम आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव  
 विद्वान् षण्णमनसा ध्यायेत् । षड्हे प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवान  
 उदानः । षड्हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥६॥ स यदि ब्रूयात्सप्तम आगा-  
 येति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्तमनसा ध्यायेत् । सप्त हीमे  
 शीर्षण्याः प्राणाः । सप्त हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि ब्रूयात्नव  
 म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्नव मनसा ध्यायेत् । सप्त  
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ । नव हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥८॥ स  
 यदि ब्रूयाद्दश म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्दश मनसा  
 ध्यायेत् । सप्त शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः । दश हैवा  
 ऽस्याऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि ब्रूयात्सहस्रम् आगायेति प्राण उद्गीथ  
 इत्येव विद्वान् सहस्रमनसा ध्यायेत् । सहस्रं हैत आदित्यरश्मयः ।  
 तेऽस्य पुत्रः । सहस्रं हैवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥१०॥ एवं हैवैतमुद्गीथ

६ नास्ति । स यदि.....व्यानञ्च । ७ भि । ८ दे । ९ द्वा । १० स्र । ११ ह ।

मर आरूणारः कक्षीवाँस्त्रसदस्युरिति पूर्वे महाराजादश्रोत्रियास्सह-  
 स्रपुत्रमुपनिषेदुः । ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥११॥ स य एवे<sup>१३</sup>  
 वेद सहस्रं हेवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥१२॥ २।६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । द्वितीयेऽनुवाकरूमात्तः ।

शर्यातो वै मानवः प्राच्यां स्थलयामयजत । तस्मिन् ह धूता-  
 न्युद्धीयेऽपित्वर्माषरे ॥१॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा  
 इति पुरस्तादागच्छन्नयं त उद्गायत्विति । बम्बेनाऽऽजद्विषेण  
 पितरो दक्षिणतोऽयं त उद्गायत्वित्युशनसा काव्येनाऽमुः<sup>११</sup>  
 पश्चादयं त उद्गायत्विसयास्येनाऽऽङ्गिरसेन मनुष्या उत्तरतो-  
 ऽयं त उद्गायत्विति ॥२॥ स हे ज्ञां वके हन्तेनाऽ पृच्छानि  
 कियतो वा एक ईशे कियत एकः कियत एक इति ॥३॥ स होवाच  
 बृहस्पतिं यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥४॥ स होवाच देवे-  
 ष्वेव श्रीस्स्याद्देवेष्वीशा स्वर्गमुत्वांलोकं गमयेयमिति ॥५॥ अथ  
 होवाच बम्बमाजद्विषम्यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥६॥ स

० १२ जेश् । १३ यद् ।

१ शर्या- २ स्थलयाम् । ३ अजयत । ४ ऽपिसग्रम् ।  
 ५ पेशिरे । ६ बिम्ब- ७ दक्षिणतो । ८ कांस्येना । ९-रां १० इवातः ।  
 ११ अशंभस्येन, अयंहिस्येना । १२ किये । १३-तिः । १४ अयम् अधिक  
 है । १५ तस्मिन्, स होवाच ..... ततस्स्यादिति ।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयमिति  
 ॥७॥ अथ होवाचोशनसं काव्यं यन्मे त्वमुद्गायैः किं ततस्स्यादिति  
 ॥८॥ स होवाचाऽसुरेष्वेव श्रीस्स्यादसुरेष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं  
 गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाङ्गिरसं यन्मे त्वमुद्गायैः किं  
 ततस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलोके दध्यान्मनुष्या-  
 न्मनुष्यलोके पितॄन् पितृलोके नुदेयाऽस्माहोकादसुरान् स्वर्गमु त्वां  
 लोकं गमयेयमिति ॥११॥२।७।

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यशो[ऽसी]ति  
 ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता वृत उत्तरतो  
 निवेशनं लिप्सेत । एतद्ध नाऽऽरुद्ध निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥  
 उत्तरत आगतो यास्य आङ्गिरसश्शर्यातस्य मानवस्योज्जगौ । स  
 प्राणेन देवान्देवलोके ऽदधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन  
 पितॄन् पितृलोके हिङ्गारेण वज्रेणाऽस्माहोकादसुराननुदत् ॥३॥  
 तान् होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः । तं ह जग्मुः ।  
 त एतेऽसुरा असम्भाव्यम्पराभूताः ॥४॥ छन्दोभिरेव वाचा

१६ य । १७ जे । १८-शाः । १९ न्वं । २०-ध्यात् । २१-हुँद् ।  
 २२ 'उ' अधिक है । २३ है ॥

१-शस । २-तृत् । ३ असंख्ययम्-।



अर्थात्स्मानवं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥५॥ ते होचुरसुरा एत तं  
वेदाम यो नोऽयामित्यमधत्तेति । तत आगच्छन् । तमेत्याऽपश्यन् ॥६॥  
तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादय-  
मास्यः । अयमास्यो ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाच-  
क्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स  
नुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्गायति प्राणेनैव देवान्देवलोके  
दधात्पानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन पितॄन् पितृलोके  
हिङ्गारेणैव वज्रेणाऽस्माल्लोकाद्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥१०॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तं ह ब्रूयाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छंस्तं ह वै  
गच्छति ॥१॥ कृन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥  
ता एता व्याहृतयः । प्रेत्येति वाग्[इति]भूर्भुवस्स्वरित्य[उदिति] ॥३॥  
तद्यत्प्रेति तत्प्राणस्तदयं लोकस्तदिमं लोकमस्मिँलोक आभजति ॥४॥  
एतमानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मिँलोक आभजति ॥५॥  
वागिति तद्ब्रह्म तदिदमन्तरिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वरिति सा त्रयी-  
विद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादित्यः । तद्यदुदित्युदिव श्लेष-

४ शंख्या-१ ५ त । ६-कृत्स् । ७-असौ । ८ पान्-१ ९ पद्विक-  
१०-वान् ॥

१-आ । २ स्या-१ ३ सत् ।

यति ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु  
 सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आहाऽस्यैको<sup>५</sup> वीरो वीर्यवान् जायते  
 य एवं वेद ॥९॥ तद्गु होवाच शाब्द्यायनिर्बहुपुत्र एष उद्रीथ<sup>७</sup> इत्ये-  
 चोपासितव्यम् । बहवो ह्येत आदिस<sup>८</sup> रश्मयस्तेऽस्य पुत्राः । तस्मा-  
 द्बहुपुत्र एष उद्रीथ इत्येचोपासितव्यमिति ॥१०॥२।६॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवासुरास्समयतन्तेत्याहुः । न ह वै तदेवासुरास्सम्येतिरे ।  
 प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः  
 प्रियाः पुत्रा अन्त आसुः । तेऽध्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-  
 ऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-  
 चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य  
 इदं वागागायद्यदिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥  
 ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥  
 तेऽब्रुवन् न वै नोऽयममृत्युं न पाप्मानमखवाक्षीत् । मनसोद्गात्रा  
 दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदममन

४ इयेष्-१५-ए। ६-यावान् । ७-ए (इत्य) । ८ आदित्यस्य । ९ त ॥

१-याय । २ 'नोद्गात्रा दीक्षामहा इति' अधिक है पर 'ते'

और 'भ्य' के बीच लाख इङ्ग से काटा गया है । ३ अथत्य-।

आगायद्यदिदम्नसा ध्यायति यदिदम्नसा भुञ्जते ॥७॥ तत्पा-  
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स  
 पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमस्यवाचीव ।  
 चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्गात्राऽदीक्षन्त ।  
 तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा  
 भुञ्जते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापमपश्यति  
 स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयम्भृत्युं न पाप्मा-  
 नमस्यवाचीव । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-  
 द्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति  
 यदिदं श्रोत्रेण भुञ्जते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव  
 श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव  
 नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमस्यवाचीव । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा  
 इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-  
 द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुञ्जते ॥१६॥ तत्पाप्मा-  
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन [ पापं ] प्राणिति स एव स  
 पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमस्यवाचीव ।  
 अनेन मुख्येन प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेऽनेन

पेन प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ॥१६॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषां स  
 ता येन मृत्युमयेष्यन्तीति ॥२०॥ न ह्येतेन प्राणेन पापं  
 ते न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं  
 मपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं  
 मायन् ॥२२॥ अपहस्य हैव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य  
 वेद ॥२२॥२१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यथा हत्वा प्रमृद्याऽतीयादेवमेवैतन्मृत्युमत्यायन् ॥१॥  
 ।चम्प्रथमामत्यवहत् । ताम्परेण मृत्युं न्यदधात् । सोऽग्निर-  
 ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् । स  
 मा अभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् ।  
 प्रादित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण  
 न्यदधात् । ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वे देवाः  
 अथ प्राणमत्यवहत् । तम्परेण मृत्युं न्यदधात् । स वायुर-  
 ॥६॥ अथाऽऽत्मने केवलमेवाऽन्नाद्यमागायत् ॥७॥ स एष

७-यम् । ८ गमयन् ।

१ स अधिक है, 'अत्यायन्' के स्थान में-यत् । २-यु । ३-न ।

एवाऽयास्यः । आस्ये<sup>५</sup> धीयते<sup>६</sup> । तस्मदयास्यः । यद्वेवा<sup>७</sup> [ऽयम्]  
 आस्य रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः<sup>८</sup> ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः ।  
 अतो हीमान्यङ्गानि रसं लभन्ते । तस्मादाङ्गिरसः<sup>९०</sup> । यद्वेवैषा-  
 मङ्गानां रसस्तस्मा द्देवाऽऽङ्गिरसः ॥९॥ तं देवा अब्रुवन् केवलं  
 वा आत्मनेऽन्नाद्यमागासीः । अनु न एतास्मिन्ननाद्य आभज ।  
 एतदस्याऽनामयत्वमस्तीति<sup>९२ ९३</sup> ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा  
 आकाशान् कुरुष्वेति । स इमान् प्राणानाकाशान्कुरुत<sup>९५ ९६</sup> ॥११॥  
 तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्राविशन्मनो भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा  
 ऽऽदित्यश्श्रोत्रम्भूत्वा दिशः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै  
 दैवी परिषदैवी सभां दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां<sup>९७</sup>  
 दैवीम्परिषदं दैवीं सभां दैवीं संसदं य एवं वेद ॥१४॥२॥११॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

यत्रो ह वैक चैता<sup>१</sup> देवता निस्पृशन्ति न हैव तत्र कश्चन  
 पाप्मान्यङ्गः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यान्नेह कश्चन पाप्मान्यङ्गः  
 परिशेक्ष्यते सर्वमेवैता<sup>३</sup> देवताः पाप्मानं निधक्ष्यन्तीति । तथा हैव

५ आसे । ६ ध्यति । ७ एर्ण । ८ स्ये । ९-ं-ऽयास्यः । १० अङ्ग- ।  
 ११ अः । १२ आमयत्वम । १३ असी । १४ आकाशात् ।  
 १५ आशासनम् । १६ कुरुत । १७ '-ं' नास्ति । १८ प्रैवी-॥

१ चै । २ क्षते । ३ एवम् । ४ एता ।

भवति ॥२॥ य उ ह वा एवंविदमृच्छति<sup>५</sup> यथैता देवता ऋत्वा  
 नीयादेवं न्येति<sup>७</sup> । एतासु ह्येवेनं देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-  
 वदति ॥३॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति य एवं वेद । य  
 एवैनमुपवदति स आर्तिमार्च्छति<sup>९</sup> ॥४॥ स य एनमृच्छादेव तादेवता  
 उपसृत्य ब्रूयादयम्माऽऽरत्<sup>११</sup> स इमामार्तिं<sup>१२</sup> न्येत्विति । तां हेवाऽऽर्ति  
 न्येति ॥५॥ यावदावासा उ हाऽस्येमे प्राणा अस्मिँलोक एतावदा-  
 वासा उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिँलोके भवन्ति ॥६॥ तस्मादु  
 हैवं विद्वान्नाऽगृहतायै विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता  
 अस्मिँलोके गृहान् करिष्यन्ति । एता अमुष्मिँलोके भवन्ति ।  
 तस्मादु लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥७॥ तस्मादु हैवं विद्वान्नाऽगृहतायै  
 विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता अस्मिँलोके गृहेभ्यो  
 गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य आयतनेभ्य इति हैव विद्याद् [एता]  
 देवता अमुष्मिँलोके लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥८॥ तस्मादु हैवं

५-विद् वा विद् । ६-दुच्छति । ७-नेति । ८-तीर् । ९-आच्छति ।

१०-एम् । ११-रत् । १२-अस्ति । १३-दावशा । १४-प्रह- । १५-अस्मिन् ।

१६-प्रवदा- । १७-‘आयतनेभ्य’ अधिक है । १८-एष ता ॥

विद्वान्मैवाऽऽहतायै विभीयान्नाऽलोकतायै एता म एतदुभयं  
संनस्यन्तीति हैव विद्यात् । तथा हैव भवति ॥६॥२।१२॥

चतुर्थोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन<sup>१</sup> वाचमदुहन् । अग्निर्ह वै ब्रह्मणो  
वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्ब्रह्मैव तत् । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥२॥  
तामेतां वाचं यथा धेनुं वत्सेनोपसृज्य प्रक्षां दुहीतैवमेव देवा वाचं  
सर्वान्कामानदुहन् ॥३॥ दुहे ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेद ।  
स हैषोऽनानृतो वाचं देवीमुदिन्धे<sup>४</sup> वद वद वदेलि ॥४॥ तद्यदिह<sup>६</sup>  
पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव  
कुर्वन्मन्यतेऽथ<sup>५</sup> हैनदाविरेव करोति । तस्माद्वाव पापं न  
कुर्यात् ॥५॥२।१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानां नेदिष्ठमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं  
साधूपचरेत् । य एनमस्मिलोके साधूपचरति<sup>१</sup> तमेधोऽमुष्मिलोके

१ पस्तेन, पत्सेन । २ वत्स- । ३-२ । ४ जहे । ५ उदिग्धे ।  
६ अग्निह । ७-त । ८ अथ- । ९ 'एष उ ह वा' वृत्तरे अनुवाक का  
यहां अधिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनमास्मिँलोके नाऽऽद्रियते तमेषोऽमुष्मिँ-  
लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्निं साधूपचरेत् ॥२॥ तं नैव  
हस्ताभ्यां स्पृशेन्न पादाभ्यां न दण्डेन ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति  
यदस्याऽन्तिकमवनेनित्के । अथ यदभिप्रसारयति तत्पादा-  
भ्याम् ॥५॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्घायां धातोः । तस्माद्वा  
अग्निं साधूपचरति । सुधायां हैवैनं दधाति ॥६॥२।१.४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानाम्महाशनतमो यदाग्निः ॥१॥ तन्न  
व्रत्यमददानोऽश्रीयात् । यो वै महाशनेऽनश्नत्यश्नातीश्वारो हैनम-  
भिषङ्क्तोः । पूतिमिव हाऽश्रीयात् ॥२॥ अथो ह प्रोक्तेऽशने ब्रूयात्  
समिन्त्स्वाऽग्निमिति । स यथा प्रोक्तेऽशने श्रेयाँसम्परिवेष्टवै  
ब्रूयात्तादृक् तत् ॥३॥ एतदु ह वाव साम यद्वाक् । यो वै चन्द्र-  
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न ह तेन करोति ॥४॥ अथ य  
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न हैव तेन करोति ॥५॥  
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्ठया साम वेदं । वाचा हि

२ तण्डेनम्, तण्डैनम् ।

१ प्र- । २ ददासीनो । ३ अभिष्( अ )ङ्क्ताः ।

४-इत् । ५ इवमिव । ६ ऽग्नी- । ७ तम् । ८ ना । ९ यद् ।



साम्नाऽऽत्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्स्वरो जायते सोऽ  
ग्निर्वाग्देव वाक् । तदत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-  
कधा साम भवद्वेदैवं हैतदेकधा साम भवतीत्येकधेव श्रेष्ठस्स्वा-  
नाम्भवति ॥८॥ तस्माद्दु हैवविदमेव साम्नाऽऽत्विज्यं कारयेत् ।  
स ह वाव साम वेद य एवं वेद ॥९॥२।१५॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

## [ तृतीयोऽध्यायः । ]

एका ह वाक् कृत्स्ना देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः । अथमेव  
योऽयम्पवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ग्रहाः ॥२॥ स ह्येषो-  
ऽस्तं नाम । अस्तमिति हेह पश्चाद्ग्रहानाचक्षते ॥३॥ स यदादिसो-  
ऽस्तमगादिति ग्रहानगादिति हैतत् । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवा-  
ऽप्येति ॥४॥ अस्तं चन्द्रमा एति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्ये-  
ति ॥५॥ अस्तं नक्षत्राणि यन्ति । तेन तान्यसर्वाणि ।  
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वाग्निर्गच्छति । तेन सोऽसर्वः । स  
एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एषहः । एति रात्रिः । तेन ते असर्वे । ते  
एतमेवाऽपीतः ॥८॥ मुह्यन्ति दिशो न वै ता रात्रिम्प्रज्ञायन्ते ।  
तेन ता असर्वाः । ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्षति च पर्जन्य  
उच्च गृह्णाति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्येति ॥१०॥ क्षीयन्त  
आप एवमोषधय एवं वनस्पतयः । तेन तान्यसर्वाणि ।  
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतत्सर्वं वायुमेवाऽप्येति तस्माद्वा-

१ पंचा । २-रः । ३-ताः । ४ तां । ५ 'स साम वेद' अधिक है ।

६ एष- , ओषा- ।

युरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कृत्स्नं] साम वेद य एवं  
 वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वपन् वाचा वदति । सेयमेव  
 प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्ये-  
 ति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥  
 न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्व-  
 म्प्राणमेवाऽभिसमेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै  
 सामवित्स कृत्स्नं साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न  
 षताऽद्य वातीति[स] हैतत्पुरुषेऽन्तर्निरमते स पूर्णस्त्वेदमान  
 आस्ते ॥२०॥ तद् शौनके<sup>१३</sup> च कापेयमभिप्रतारिणं च[कात्सेनिम्]  
 ब्राह्मणः<sup>१२</sup> परिवेविष्यमाणा<sup>१३</sup> उपावत्राज ॥२१॥३१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तौ ह विभिन्ने<sup>१</sup> । तं ह नाऽऽद्राते<sup>२</sup> को वा कोवेति<sup>३</sup> मन्यमानौ  
 ॥१॥ तौ होपजगौ ।

महात्मनश्चतुरो देव एकः कस्<sup>३</sup> जगार भुवनस्य गोपाः ।

तं कापेयं न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टम् ॥

७ ऽमम् । ८-यति । ९-मिते । १०-णा । ११-काश् १२ विष्या-  
 १३-प्राजा ॥

१ द्विभ- । २ द्राते । ३ सो । ४ कालपेय । ५ निविष्टम् ।

२॥ स होवाचाऽभिप्रतारीमं वाव प्रपद्य प्रतिबुद्धीति ।

१० ११ १२  
१ अयम्प्रत्युच्य इति ॥३॥ तं ह प्रत्युवाच—

१३ १४ १५  
आत्मा देवानामुत मर्त्यानां हिरण्यदन्तो रपसो न सृजः ।

१६ १७ १८ १९  
हान्तमस्य महिमानमाहुरनद्यमानो यददन्तमस्ति ॥

२० २१  
॥॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति । वाग्वा अग्निः ।

२२  
मा देवः । स यत्र स्वपिति तद्वाचम्प्राणो गिरति ॥५॥

२३  
मास्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तन्मनः प्राणो

२४  
॥६॥ चक्षुरादित्यस्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति

२५  
प्राणो गिरति ॥७॥ श्रोत्रं दिशस्तां महात्मानो देवाः ।

स्वपिति तच्छ्रोत्रं प्राणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो

२६ २७ २८  
ः इत्येतद् तत् ॥९॥ कस्स जगारेति । प्रजापतिर्वै कः । स

२९  
॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति । स उवाच भुवनस्य गोपाः

३०  
तं कापेय न विजानन्त्येक इति । न ह्येतमेके विजानन्ति ॥११॥

३१  
परिन् बहुधा निविष्टमिति । बहुधा ह्येवैष निविष्टो यत्प्राणः

३२  
आत्मा देवानामुत मर्त्यानामिति । आत्मा ह्येष देवाना-

३३  
म, मा । ७ वय्या, यय्या । ८ अया । ९ वाव । १०-युष्मे ।

३४  
। १२-याच । १३ मत्य्- । १४ परसो । १५ जु । १६ मभि-

३५  
। १८ दतम, दंतम । १९ अति । २० पाश, वा । २१ या ।

३६  
पिति । २३-न, इस के पश्चात् प्रा । २४-अर् । २५ महात्मा

३७  
है । २६ क । २७ सो । २८ जगर्- । २९-एध । ३०-धी ।

मुत् प्रत्यानाम ॥१४॥ हिरण्यदन्तो रपसो न सूनुरिति । न ह्येष  
 सूनुः । सूनुरूपो ह्येष सैन सूनुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमा-  
 दुरिति । महान्तं ह्येतस्य महिमानमाहुः ॥१६॥ अनद्यमानो  
 यददन्तमतीति । अनद्यमानो ह्येषोऽदन्तमति ॥१७॥१२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

तस्यैष श्रीरात्मा समुद्रद्वौ यदसावादिसः । तस्माद्वायत्रस्य स्तोत्रे  
 णाऽवान्यान्नेच्छिया अवच्छिद्या इति ॥१॥ स एष एवोक्तम् ।  
 यत्पुरस्तादवानिति तदेतदुक्तस्य शिरो यदाक्षिणतरस दक्षिणः पत्नो  
 यदुत्तरतस्स उत्तरः पत्नो यत्पश्चात्[तव]पुच्छम् ॥२॥ अथमेव  
 प्राण उक्तस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्तस्याऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं  
 वेद स हाऽमुष्मिँ लोके साङ्गस्सतनुस्[सर्वस्]सम्भवति ॥३॥  
 शश्वद् वा अमुष्मिँलोके यदिदम्पुरुषस्याऽऽरद्वौ शिश्रं कर्णौ नासिके  
 यत्किं चाऽनस्थिकं न सम्भवति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्तस्या-  
 ऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं वेद स हैवाऽमुष्मिँलोके साङ्गस्सतनुस्सर्व-  
 स्सम्भवति ॥५॥ तदेतद्वैश्वामित्रमुक्तम् । तदन्नं वै विश्वम्प्राणो मित्रम्

• ३१-से । ३२ नस् । ३३ स् । ३४ आहुर् । और 'इति महान्त  
 ह्येतस्य महिमाहुः' अधिक है । ३५ अन्तम् । ३६ सूनुर-॥

१ समाद्र- । २ वच्छ- । ३ वा इति । ४-इणः । ५ सद् । इतद् ।  
 ७ सङ्गतस् । ८-तद् । ९ अक्त- ।

६॥ तद् विश्वामित्रश्रमेण तपसा व्रतचर्येणोन्द्रस्य प्रियं धामो-  
 जगाम ॥७॥ तस्मा उ हैतमोवाच यदिदम्मनुष्यानागतम् ॥८॥  
 उ स उपनिषसाद ज्योतिरेतदुक्थमिति ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे  
 अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥  
 अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽयुरेतदुक्थमिति ॥११॥ आयुरिति  
 अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितं ॥१२॥  
 अथ हैनं वसिष्ठ उपनिषसाद गौरेतदुक्थमिति । तदेतदन्नमेव ।  
 अन्नं हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्गदस्य प्राणस्य पुरुषश्शरीरमथ केना-  
 न्य प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति  
 द्वाचश्शरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसश्शरीरं यच्चक्षुषा पश्यति  
 चक्षुषश्शरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य शरीरम् । एवमु-  
 ऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥ ३।३॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तदेतदुक्थं सप्तविधम् । शस्यते स्तोत्रियोऽनुरूपो धार्य्या  
 गाथस्मृतं निवित्परिधानीया ॥ १ ॥ इयमेव स्तोत्रियो

१० प्र-। ११ तद् । १२ उत्थ-। १३ (-साद ) गौर, आयुर्गौर ।  
 ४-क । १५ उतेद् । १६ ऽन्येन ।

१-ऽग्निर अधिक है । २-नीयम् । ३ नास्ति ।

अग्निरनु रूपो वायुर्धाय्याऽन्तरिक्षम्प्रगाथो द्यौस्सूक्तमादित्यो निवित् ।  
 तस्माद्ब्रह्मत्वा उदिते निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निवित् ।  
 दिशः परिधानीयेत्यधिदेवतम् ॥२॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव  
 स्तोत्रियः प्रजाऽनुरूपः प्राणो धाय्या मनः प्रगाथदिशरस्सूक्तं  
 चक्षुर्निविच्छ्रोत्रम्परिधानीया ॥३॥ तद्वैतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्य-  
 नुष्टभैके । त्रिष्टुभात्वेव परिदध्यात् ॥४॥ तद्वैतदेक एता व्याहृती-  
 रभिव्याहृत्य शंसन्ति महान्महा समधत्त देवो देव्या समधत्त  
 ब्रह्म ब्राह्मण्या १० समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥५॥ तस्मा-  
 दिदानीम्पुरुषस्य शरीराणि प्रतिसंहितानि । पुरुषो हेतदुक्थम्  
 ॥६॥ महान्महा समधत्तेति । अग्निर्वै महानियमेव मही ॥७॥  
 देवो देव्या समधत्तेति । वायुर्वै देवोऽन्तरिक्षं देवी १२ ॥८॥ ब्रह्मा  
 ब्राह्मण्या समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म द्यौर्ब्राह्मणी १३ ॥९॥ तासां  
 वा एतासां देवतानां द्वयोर्द्वयोर्देवतयोर्नव-नवाऽक्षराणि सम्पद्यन्ते ।  
 ष्तादिमे लोकास्त्रिणवा भवन्ति १४ ॥१०॥ तद्ब्रह्म वै त्रिवृत् ।  
 तद्ब्रह्माऽभिव्याहृत्य शंसन्ति । एष उ एव स्तोमस्सोऽनुचरः १५ ॥११॥

४ ज्ञास्या, ज्ञार्या । ५ प्राग्-। ६ धाय्या । ७-धात्नी-।  
 ८ तदुक्थम् अधिक है (हाशिये में) ? । ९-य-। १०-महा । ११ इद्वि ।  
 १२-वा । १३-द्यौ । १४-यो । १५-औ । १६-कौ । १७-वा । १८-सा ।

यदिममाहुरेकस्तोम इत्ययमेव योऽयम्पवते । एषोऽधिदेवतम् ।  
 प्राणोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः ॥१२॥ तद्यथा ह वै मणौ  
 मणिसूत्रं सम्प्रोतं स्याद्—॥१३॥१४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१—एवं हैतस्मिन्सर्वाभिदं सम्प्रोतं गन्धर्वाप्सरसः पशवो  
 मनुष्याः ॥१॥ तद्ध मुञ्जस्सायश्रवसः प्रययौ । तस्मै ह श्वाजनिर्वे-  
 श्यः प्रेयाय ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतपिण्ड उरासि  
 निपपात । तं हाऽऽदायाऽनुदधौ ॥३॥ ततो ह वै स्तोमं ददर्शाऽन्तरिक्षे  
 विततम्बहुशोभमानम् । तस्यो ह युक्तिं ददर्श ॥४॥ बहिष्पवमान-  
 मासद्य टीत्र विधिं प्राण्य इति कुर्यात् टीत्र गृह्णित्वा अपान्य इति  
 वाचा । दिदृक्षे तैवाऽस्तिभ्यं शुश्रूषे तैव कर्णाभ्याम् । स्वयमिदम्म-  
 नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इषुरत्यग्रो भवति न वै स ततो  
 हिनस्ति तद् वा एतं नोपाप्नुयात् । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा  
 विम्बेन वृगमानयेदेवमेवैनमेतया देवतयाऽऽनयति । स युक्तः  
 करोति । एष एवापि युक्तः ॥६॥१५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१६—रन्तम् ॥

१ पञ्चम (एवा) के पहले पञ्चम कं० का द्वि० वाक्य । २ मौञ्ज— ३  
 साहश— ४ तमस्मै । ५ प्रोयाय । ६ तेतो ७—अं । ८—इ । ९ टीत्र, पहला  
 अक्षर ल भी हो । १० गृह्णित्वा । ११ अस्ति । हनस्ति । १२ यद् । १३—यो । १४—ति ॥



योऽसौ साम्नः प्रक्तिं वेद प्र हास्मै दीयते ॥१॥ ददा इति ह वा  
 अयमाग्निर्दीप्यते तथेति वायुः पवते हन्तेति चन्द्रमा ओमित्या-  
 दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साम्नः प्रक्तिः । एतां ह वै साम्नः प्रक्तिं  
 सुदक्षिणः क्षैमिर्विदां चकार ॥३॥ तां हैतां होतुर्वाऽऽज्ये गायन्मै-  
 प्रावरुणस्य वा तां ददा<sup>४</sup> तथा<sup>३</sup> हन्ता<sup>७</sup> हिम्भा ओवा इति ।  
 प्र ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान् बहुनुपर्युपरि य  
 एवमेतां साम्नः प्रक्तिं वेद ॥५॥ य उ ह वा अबन्धुर्वन्धुमत्साम  
 वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीवचक्षते तद्वाऽपि  
 श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥६॥ अग्निर्ह वा  
 अबन्धुर्वन्धुमत्साम । कस्माद्वा ह्येनं दावोः कस्माद्वा पर्यावृत्य  
 मन्थन्ति स श्रैष्ठ्यायाऽऽधिपत्यायाऽन्नाद्याय पुरोधायै जायते  
 ॥७॥ स यत्र ह वा अप्येवंविदे न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीव-  
 चक्षते तद्वाऽपि श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधाम्पर्येति ॥८॥३॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स्वयमु तत्र यत्रैनं विदुः ॥१॥ सुदक्षिणो ह वै क्षैमिः प्राचीनशा-  
 भिर्जाबालौ ते ह सन्नह्यचारिण आसुः ॥२॥ ते हेमे बहु जप्यस्य

१ प्रक्तिः । २ तदान्, ददान् । ३ प्रक्तिः, प्रवृत्तिः । ४ तौ ।  
 ५ 'हन्ता' अधिक है । ७ नास्ति । ८ अप्य् । ९-हृन्त्य । १०-उप ।  
 ११-सु । १२-धा । १३ अष्ट्- । १४-आये । १५ परि ॥

१-शाःखिर । २ है ।

स्य चाऽनूचिरे<sup>३</sup> प्राचीनशालिश्च<sup>४</sup> जाबालौ च ॥३॥ अथ ह<sup>५</sup>  
 दक्षिणः<sup>५</sup> क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याज्जो यत्सुविदितं तद् स्मैव  
 ॥४॥ त उ ह वा अपोदिता व्याक्रोशमानाश्चेरुश्शुद्रो<sup>६ ७</sup>  
 न इति ह स्म सुदक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति<sup>८</sup> प्राचीनशालिश्च<sup>९</sup>  
 च ॥५॥ स ह स्माऽऽह सुदक्षिणः क्षैमिर्यत्र भूयिष्ठाः  
 लास्मागता भवितारस्तन्न एष संवादो नाऽनुपदृष्टे शूद्रा  
 दिष्यामह इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबालौ दिदीक्षाते<sup>११</sup> शुक्रश्च<sup>१२</sup>  
 । तयोर्ह प्राचीनशालिर्वृत उद्गाता ॥७॥ स तद् सुदक्षिणो  
 जाबालौ हाऽदीक्षिषातामिति । सं ह संग्रहीतारमुवाचा-<sup>१६</sup>  
 ऽरे जाबालौ हाऽदीक्षिषातां तद्मिष्याव इति ॥८॥ ३७॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा  
 गादिति ॥९॥ अथ ह स्म वै यः पुराब्रह्मवाद्यं वदत्यन्य-  
 गादिति ह स्मेनम्मन्यन्ते । अथो ह स्मैन्मृत्पिमवैवोपासते  
 ह संग्रहीतोवाचाऽथ यद्गवस्ते ताभ्यां न कुशलं

हे । ३ ऽरुच-१४-शालाश् । ५-गा । ६ प्य-।-आ । ७ चोरुश ।  
 ८-अकीश-। १० लीश । ११-पतिष्य-। १२ वदी-। १३-रुश ।  
 १५ संसं-। १६ दिदीक्ष-। १७-यांस्वा ॥

कथेत्थमात्थेति ॥३॥ ओमिति होवाच गन्तव्यम् आचार्यस्सुय-  
 मानमन्यतेति ॥४॥ स ह रथमास्थाय प्रधावयांचकार । तं ह स्म  
 प्रतीचन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । सुदक्षिण इति । न वै नूनं स  
 इदमभ्यवेयादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-  
 स्थायोवाचाऽङ्गन्वित्थं गृहपता३ इति । तं ह नाऽनूदतिष्ठा-  
 सत् । स होवाचाऽनूत्थाता म एधि । कृष्णाजिनोऽसी[ति] ।  
 तदिमे कुरुपञ्चाला अविदुरनूत्थातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह  
 कनीयान्प्रातोवाचाऽनुत्तिष्ठ । भगव उद्गातारमिति । तं हा  
 ऽनूत्तस्थौ ॥८॥ स होवाच त्रिवे गृहपते पुरुषो जायते ।  
 पितुरेवाऽग्नेऽधि जायतेऽथ मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिवेव त्रियत्  
 इति । स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति-॥१०॥३॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

-तत्प्रथममिन्द्रियते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । लोहि-  
 तस्तोको वा वै स तदाभवत्यपां वा स्तोकः । किं हि स तदा-  
 भवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या

२ त- ३ आच- ४ सुय- ५-ष्ठ- ६-ऊ- ७-म- ८-इति अधिक है । ९ प्रातो । १० वा । ११ अनुत्तिष्ठ ।  
 १२ त्रिव- १३ अ, ऊ । १४ नास्ति । १५ त्रियत् ॥

१ अन्य- २ वो । ३ स ।

चैनं तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ  
य एनमेतद्दीक्षयन्ति ताद्वितीयम्भ्रयते । वपन्ति केशश्मश्रूणि ।  
निकृन्तन्ति नखान् । प्रत्यञ्जन्त्यङ्गानि । प्रत्यचत्यङ्गुलीः ।  
अपहतोऽपवेष्टित आस्ते । न जुहोति । न यजते । न योषितं  
चरति । अमानुषीं वाचं वदति । शृतस्य दायैषं तदा रूपम्भवति  
॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं  
तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ य  
एनमेतदस्माज्जोकात्प्रेतंचित्यामादधाति तद् तृतीयम्भ्रयते ॥६॥ स  
यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्यु-  
मतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावद्वैवोक्त्वा  
रथमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जाबालम्प्रत्येतं कनीयान्  
भ्रातोवाच काम्भवाञ्छुद्रको वाचमवादीति । हस्तिना गाधमैषी-  
रिति ॥९॥ प्र हैवैनं तच्छृशंस यः कथमवोचद्गव इति । यस्त्रयाणा-  
म्मृत्युनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥ ११-६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४ चे । ५ दि-१६-अजत्य् । ७ यज्-१ ८ अव-१ ९ यौष-१० स ।  
११ का अधिक है । १२ यन्त्स । १३-तीति । १४ वा । १५ वहतीति  
अधिक है । १६-वच् ॥

तं वाव भगवस्ते पितोद्गातारममन्यतेति होवाच । तदु ह  
 प्राचीनशाला विदुर्य एषामयं वृत उद्गाताऽऽस । तस्मिन् ह ना-  
 ऽनुविदुः ॥१॥ ते होचुरनुधावत कारइवियमिति । तं हाऽनु-  
 सस्रुः । ते ह कारइवियमुद्गातारं चक्रिरे ब्रह्माण्मप्राचीन-  
 शालिम ॥२॥ तं हाऽभ्यवेद्योवाचैवमेष ब्राह्मणो मोघाय  
 वादाय नाऽग्लायत् । स नाऽणु साम्नोऽन्विच्छतीति । अति हैवैनं  
 तच्चक्रे ॥३॥ स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्च-  
 त्यादित्यो हैनं तद्योन्यां रेतो भूतं<sup>११</sup> सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र  
 मृत्योरीशे ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति<sup>१३</sup>  
 तद् वाव स ततोऽनुसम्भवति प्राणं च । यदा होव रेतस्सिक्तं  
 प्राणं आविशत्यथ तत्सम्भवति ॥५॥ अथो यदेवैनमेतद्दीप्तयन्त्य-  
 प्रिहैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हैवाऽस्य तत्र  
 मृत्योरीशे ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति  
 तमिव स ततोऽनुसम्भवति छन्दांसि चैव ॥७॥ अथ य एनमे-

१-ए । २ विदुर् । ३ सः । ४ कान्त्यावयम । ५-स्रः ।  
 ६ ब्राह्मणम् । ७-पेक्षया । ८ न्वीच- । ९ रणम् । १० नास्ति । ११ रत्- ।  
 १२-म्री । १३ 'अथोवाच' अधिक है । १४ 'अथो य एनमेतद्दी-  
 प्तयन्त्य'.....'तत्रमृत्योरीशे' अधिक है । १५ 'अथो यदेवैनमे-  
 तद्दीप्तयन्ति' अधिक है । १६ आसि ।

तदस्माल्लोकात्प्रेतं चित्यामादधाति चन्द्रमा हैवैनं तद्योग्यां रेतो  
भूतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे ॥८॥ अथो यदेवैन-  
मेतदस्माल्लोकात्<sup>१७</sup> प्रेतं चित्यामादधत्यथो या एवैता अवोत्तणी-  
या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवाति प्राणम्भेव । प्राणो ह्यापः ॥६॥  
तं ह वा एवंविदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यमृत्यु-  
मतिवहति वागित्यग्निं हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥  
तान्<sup>१९</sup> वा एतान्मृत्यून साञ्जोद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति-  
वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उतैषां ज्येष्ठ<sup>२०</sup> उत वा किनष्ठ उतैषाम्पुत्र उत वा पितैषाम् ।

एको ह देवो मनसि प्रविष्टः पूर्वो ह जज्ञे स उ गर्भेऽन्तः—

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्त<sup>२१</sup> इममेव पुरुषं योऽयमाकृष्टौ<sup>२२</sup>  
ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन[... ] ॥१३॥३१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

त्रिह<sup>१</sup> वै पुरुषो अियते त्रिर्जायते<sup>२</sup> ॥१॥ स हैतदेव प्रथममियते  
यद्रेतस्सिक्तं सम्भूतम्भवाति । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । अशाम-

१७-द्यान् । १८-वन्तीति । १९ ता । २० जैष्ठ । २१ त्पु- ।  
२२ अकृष्टान् ॥

१ हे । २ 'स हैतदेव प्रथममियते त्रिर्जायते' अधिक है । इत्सम्- ।

भिजायते ॥२॥ अथैतद्वितीयमिन्द्रियते यद्दीक्षते । स छन्दांस्येवा-  
 ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथैतत् तृतीयमिन्द्रियते  
 यन्मिन्द्रियते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥  
 तदेतत् श्यावृद्धायत्रं गायति । तस्य प्रथमयाऽऽवृतेममेव लोकं जयति  
 यद्वा चाऽस्मिँलोके । तदेतेन चैनम्प्राणेन समर्थयति यमभिसम्भवसेतां  
 चाऽस्मा आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽवृते-  
 दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यद्वा चान्तरिक्षे । तदेतैश्चैनं छन्दोभिस्स-  
 मर्थयति यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-  
 भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽवृताऽमुमेव लोकम् जयति यद्वा  
 चाऽमुष्मिँलोके । तदेतया चैनं श्रद्धया समर्थयति ययैवैनमेतच्छ्रद्ध-  
 याऽग्नात्भ्यादधति समयमितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-  
 कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥३॥११॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतद्वै तिस्रभिरावृद्धिरिमाँश्च लोकाञ्जयसेतैश्चैनम्भूतैस्समर्थय-  
 ति यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्कारस्यैव । तं ह स्वर्गे  
 लोके सन्तम्भृत्युन्वेलशनया ॥२॥ श्रीर्वा एषा प्रजापतिस्साम्नो

४ ओव । ५-म । ६ त्रिय- । ७-अन्ति । ८ इम-(!) । ९-मृध- ।  
 १० 'न्यभिसम्भवति' अधिक है लाल रंग से कटा हुआ । ११ च ।  
 १२ ऽआह । १३-आ । ०

१ चोक्- । २-मृध- । ३ नास्ति । ४ सितम् । ५ अनेति । ६ श्री ।

यदिङ्कारः । तमिदुद्गाता श्रिया प्रजापतिना हिङ्कारेण मृत्युमपसेध-  
 त्ति ॥३॥ हुम्भेत्याह माऽत्र नु गा यत्रैतद्यजमान इति हैतव ॥४॥  
 स यथा श्रेयसा सिद्धः पापीयान् प्रतिविजते एवं हैवाऽस्मान्मृत्युः  
 पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्मेत्याह चन्द्रमा वै मा मासः । एष  
 ह वै मा मासः । तस्मान्मेत्याह । भा इति हैतत्परोक्षेणैव । यस्माद्देव  
 मेत्याह यद्देव मेत्याहैतानि त्रीणि । तस्मान्मेति ब्रूयात् ॥६॥११२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य । भार्तीव हि ब्रह्मवर्चसम् ॥१॥  
 हुम्बो इति पशुकामस्य । बो इति ह पशवो वाच्यन्ते ॥२॥ हुम्  
 बगिति श्रीकामस्य । बगिति ह श्रियम्पणायन्ति ॥३॥ हुम्  
 भा ओवा इत्येतदेवोपगीतम् ॥४॥ महदिवाऽभिपरिवर्तयन् गाये-  
 दिति ह स्माऽऽह नाको महाग्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा  
 स्थाणुर्मर्षयित्वेत्तरेण वेत्तरेण वा परियायात् तादृक्तव ॥५॥ तदु  
 होवाच शाब्धायनिः कस्मै कामाय स्थाणुर्मर्षयेत् । अथोपगीतमे-  
 वैतव । नैवैतदाद्रियेतेति ॥६॥ [इति] नु हिङ्काराणाम् । अथ वा

७ एव । ८ 'इति' अधिक है । ९-विच- । १० ए एवम् ।

११ भाग । १२ एव ॥

१ बो । २ श्रिक-,-सु । ३-वा, अचित्क । ४-रेय । ५ पर्या- ।

६ एव । ७ अत्र- । ८ हिङ्कार- ।



अतो निधनमेव । ओवा इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साप्नो निधन-  
 मन्तस्वर्गो लोकानामन्तो ब्रध्नस्य विष्टपम् ॥७॥ तमेतदुद्गाता  
 यजमानमोमिस्येतेनाक्षरेणान्ते स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ यं उं  
 ह वा अपक्षो वृक्षाग्रं गच्छत्सव वै स ततः पद्यते । अथ यद्वै पक्षी  
 वृक्षाग्रे यदसिंधारायां यत्क्षुरंधारायामास्ते न वै स ततोऽवपद्यते ।  
 पक्षाभ्यां हि सयत आस्ते ॥९॥ तमेतदुद्गाता यजमा-  
 नमोमिस्येतेनाक्षरेण खरपक्षं कृत्वाऽन्ते स्वर्गे लोके दधाति । स  
 यथा पक्ष्यविभ्यदासीतैवमेव स्वर्गे लोकेऽविभ्यदास्तेऽथाऽऽचरति  
 ॥१०॥ ते ह वा एते अक्षरे देवलोकश्चैव मनुष्यलोकश्च । आदि-  
 यश्च ह वा एते अक्षरे चन्द्रमाश्च ॥११॥ आदिस एव देवलोक-  
 श्चन्द्रमा मनुष्यलोकः । ओमिस्यादिसौ वागिति चन्द्रमाः ॥१२॥  
 तमेतदुद्गाता यजमानमोमिस्येतेनाक्षरेणाऽऽदिसं देवलोकं गमय-  
 ति । १३॥३॥१३॥

तृतीयेऽनुयाके तृतीयः खण्डः ।

तं हाऽऽगतस्पृच्छति कस्त्वमसीति । स यौ ह नाम्नो वा गो-  
 त्रेण वा प्रब्रूते तं हाऽऽह यस्तोऽयम्मय्यात्माऽभूदेष ते स इति ॥१॥

१-द्विसयत । १०-ओ । ११-य ॥

१-प्य ।

तस्मिन् हाऽऽत्मन् प्रतिपत् । तमृतवस्सम्पदार्यपद्गृहीतमपकर्षन्ति ।  
 तस्य हाऽहोरात्रे लोकमाप्नुतः ॥२॥ तस्मा उ हैतेन प्रज्जुवीत को-  
 ऽहमस्मि सुवस्त्वम् । स त्वां स्वर्ग्यं स्वर्गामिति ॥३॥ को ह वै  
 प्रजापतिरथ हैवंविदेव सुवर्गः । स हि सुवर्गच्छति ॥४॥ तं हा-  
 ऽऽह यस्त्वमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येद्द्वीति ॥५॥  
 स एतमेव सुकृतरसम्प्रविशति । यदु ह वा अस्मिँल्लोके मनुष्या  
 यजन्ते यत्साधु कुर्वन्ति तदेषामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति । तदमुं  
 चन्द्रमसम्मनुष्यलोकम्प्रविशति ॥६॥ तस्येदम्मानुषनिकाशन-  
 मण्डमुदरेऽन्तस्सम्भवति । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति स्तनावभि ।  
 स यदाजायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ अजातो  
 ह वै तावत्पुरुषो यावन्न यजते स यज्ञेनैव जायते । स यथाऽण्ड  
 म्प्रथमनिर्भिण्णमेवमेव ॥८॥ तदा ते ह वा एवंविदुद्राता यज-  
 मानमोमित्येतेनाऽत्तरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमयति । वाग्नि-  
 त्यस्मा उत्तरेणाऽत्तरेण चन्द्रमसमन्नाद्यमक्षितिम्प्रयच्छति ॥९॥  
 अथ यस्यैतदविद्वानुद्रायति न हैवैनं देवलोकं गमयति नो

२ त । ३ तेन । ४-ब्रह्-, -वीत् । ५-गम् । ६ सुस्वर्-, -म् ।  
 ७ जायन्ते । ८-स- । ९-पै । १०-ष-निक-इसके पश्चात् 'इदम्' । ११ अदरे ।  
 १२-ब्रह्- । १३-जाच् । १४ जायते । १५-स । १६-यक्षिति । १७ ना ।

एनमन्नाद्येन समर्धयति<sup>१८</sup> ॥१०॥ स यथाऽरहं विदिग्धं<sup>१९</sup> शयीता-  
 ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्शेतेऽन्नाद्यमलभमानः<sup>२०</sup> ॥११॥  
 तस्माद्दु हैवंविदमेवोद्गापयेत् । एवंविदिहैवोद्गातरिति हूतः  
 प्रतिगृणुयात्<sup>२१</sup> ॥१२॥३११४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

वागिति हेन्द्रो विश्वामित्रायोक्थमुवाच । तदेतद्विश्वामित्रा  
 उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्ह वसिष्ठाय ब्रह्मत्वमुवाच । तस्मादा-  
 हुर्वासिष्ठमेव ब्रह्मेति ॥२॥ तदु वा आहुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ  
 एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजाप्रतिः प्राजिजनिषत् । स  
 तपोऽतप्यत् । स ऐक्षत हन्त नु प्रतिष्ठां जनयै<sup>३</sup> ततो याः प्रजास्रक्ष्ये  
 ता एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति नाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदधिष्यन्त इति ॥४॥  
 स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकममुं लोकमिति । तानिमाँस्त्री-  
 ल्लोकाञ्जनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत् । तेभ्यस्संतप्ते-  
 भ्यस्त्रीणि शुक्रायुदायन्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादिसो  
 दिवः ॥६॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यस्संतप्तेभ्य-

१८-मृध्-। १९-आ । २०-आः । २१-श्रुणु-॥

१ है । २ उत्प-। ३ जाये, जनये । ४ ऋक्-। ५ ताम् । ६-मु ।  
 ७ सममषद् । ८ स्त । ९-न् ।

स्त्रीण्येव शुक्रायुदायन्नुग्वेद एवाऽग्नेर्यजुर्वेदो वायोस्सामवेद  
 आदिसात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्य-  
 स्संतप्तेभ्यस्त्रीण्येव शुक्रायुदायन्भूरिसेवग्वेदाद्भुव इति यजुर्वेदा-  
 स्स्वरिति सामवेदात्तदेव ॥८॥ तद्ध वै त्रय्यै विद्यायै शुक्रम् ।  
 एतावदिदं सर्वम् । स यो वै त्रयीं विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य  
 लोको भवति स एवं वेद ॥९॥३।१५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं तान्न यज्ञो योऽयम्पवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ ।  
 वाचा च ह्येष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुद्गाते-  
 सन्यतरां वाचा वर्तनिं संस्कुर्वन्ति । तस्मात्ते वाचा कुर्वन्ति ।  
 ब्रह्मैव मनसाऽन्यतराम् । तस्मात्स तूष्णीमास्ते ॥२॥ स यद्ध सो-  
 ऽपि स्तूयमाने वा शस्यमाने वा वावद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-  
 ऽस्यापि तर्हि स वाचा वर्तनिं संस्कुर्यात् ॥३॥ स यथा पुरुष  
 एकपाद्यन् भ्रेषन्नेति रथो वैकचक्रो वर्तमान एवमेव तर्हि यज्ञो  
 भ्रेषन्नेति ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माणम्प्रातरनु-

पाक उपाकृते वा वद्यमानमासीनमर्थं वा इमे तर्हि यज्ञस्याऽन्तर-  
 शुरिति । अर्थं हि ते तर्हि यज्ञस्याऽन्तरीयुः ॥५॥ तस्माद्ब्रह्मा  
 प्रातस्नुवाक उपाकृते वाचंयम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वषट्  
 कारादितरेषां स्तुतशस्त्राणामेवाऽऽसंस्थायै पवमानानाम् ॥६॥  
 स यथा पुरुष उभया पाद्यन् श्रेषं न न्येति रथो वोभयानक्रो-  
 वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो श्रेषं न न्येति ॥७॥३१६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यदि यज्ञ ऋक्तो श्रेषभियाद्ब्रह्मणो प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि  
 यजुष्टो ब्रह्मणो प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि सामतो ब्रह्मणो प्रब्रूतेत्याहुः ।  
 अथ यद्यनुपस्मृतात् कुत इदमजनीति ब्रह्मणो प्रब्रूतेत्याहुः ॥१॥  
 स ब्रह्मा प्राङ् उदेत् स्रवेणाऽऽग्नीध्र आज्यं जुहुयाद्भुवस्स्वरित्से-  
 ताभिर्व्याहृतिभिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वप्रायश्चित्तयः । तद्यथा  
 स्वघ्न्येन सुवर्णा संदध्यात् सुवर्णेन रजतं रजतेन त्रपु त्रपुणा  
 लोहायसं लोहायसेन कार्ष्णायसं कार्ष्णायसेन दारु दारु च चर्म

५-श्लो । ६ ' आसु ' द्विवार पदा गया है । ७-त्र । ८-गु-  
 र्दृ । ९-ऽन्तर्युः । १०-श्रे । ११-पाद् । १२-यद् । १३-नं ॥

१३-१-२-श्लो । ३-रथ । ४-प्रन्दु, प्रा । ५-विदध- । ६-यु-  
 ७-क- ।

च श्लेष्मणैवमेवैवं विद्वांस्तत्सर्वं भिषज्यति ॥३॥ तदाहुर्दहोषीन्मे  
 ग्रहान्मेऽग्रहीदित्यध्वर्यवे दक्षिणानयन्त्यशंसीन्मे वषट् अकर्म इति  
 होत्र उदगासीन्म इत्युद्गात्रेऽथ किं चक्रुषे ब्रह्मणो तूष्णीमासीनाथ  
 समावतीरेवेतैर्ऋत्विग्भिर्दक्षिणा नयन्तीति ॥४॥ स ब्रूयादध्व-  
 १३ १४ १५ १६  
 माग्ध वै स यज्ञस्याऽर्धं हेष यज्ञस्य वहतीति । अर्धा हं स्म वै  
 पुरा ब्रह्मणे दक्षिणा नयन्तीति । अर्धा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्यः ॥५॥  
 तस्यैष श्लोको—

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वम्, मयि लोका मयि दिशश्चतस्रः ।

मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति, मय्याप ओषधयश्च सर्वा, इति ॥६॥

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वमित्सेवंविदं ह वावेदं सर्वम्भुवनमन्वा-  
 यत्तम् ॥७॥ मयि लोका मयि दिशश्चतस्र इत्सेवंविदि ह वाव लोका  
 एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति मय्याप  
 ओषधयश्च सर्वा इत्सेवंविदि ह वावेदं सर्वम्भुवनमप्रतिष्ठितम् ॥९॥  
 तस्माद्दु ह्वंविदेमेव ब्रह्माणं कुर्वीत । स ह वाव ब्रह्मा य एवं  
 वेद ॥१०॥३॥१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

८ इत्येष्म (सिद्ध्यत्) ण कोष्ठ लाल रंग में कटा हुआ । ९-षष् ।  
 १० अक्रुण । ११ मय । २० 'एव' नास्ति । २१ आशांसीन् । १२-२२ ।  
 १३-आह । १४ नास्ति । १५ वै । १६ ष । १७ मतिही । १८-९ । १९ एव ।

अथ वा अतस्तोमभागानामेवाऽनुमन्त्राः ॥१॥ तद्वैतदेके  
 स्तोमभागैरेवाऽनुमन्त्रयन्ते । तत्तथा न कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा  
 प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्ते सविता वै  
 देवानाम्प्रसविता सवित्रा प्रसूता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः ।  
 तदु तथा न कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वरित्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्त एषा  
 वै ऋषीत्रिद्या त्रय्यै वेदं विद्ययाऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः । तदु  
 तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमित्येवानुमन्त्रयेत् ॥५॥ अथैष  
 वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः । तेन हैतेन वसिष्ठः प्रजातिकामो-  
 ऽनुमन्त्रयां चक्रे देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य  
 भूर्भुवस्स्वरोमिति । ततो वै स बहुः प्रजया पशुभिः प्राजायत ॥६॥  
 स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽनुमन्त्रयेत् बहुरेव  
 प्रजया पशुभिः प्रजायते । इयं त्वेवस्थितिरोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत्  
 ॥७॥३॥१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१ स्तोमा- २ नु । ३ कुर्वाद् । ४ रं । ५ ने ' ए ' लाङ् में कटा,  
 ष । ६-ई । ७ त्रय्ये । ८ ऽव । ९-याया । १०-हु । ११-जाया ।  
 १२ प्राज्- । १३ तस्तोम्- । १४-येते । १५ इयं । १६ पञ्चमः ।  
 १७-स्ता ॥

अथैष वाचा ब्रह्ममुदगृह्णाति । यदाह सोमः पवत इति वोपावर्त-  
 ध्वमिति वा वाचैव तद्वाचो ब्रह्मं विगृह्णाते वाचस्सत्येनातिमुच्यते ।  
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत् ॥१॥ देवा वा अनया<sup>२</sup> ऋष्या  
 [ विद्यया ] सरसयोर्ध्वास्वर्गं लोकमुदक्रामन् । ते मनुष्या-  
 णामन्वागमाद्भिभ्यतस्त्रयं वेदमपीलयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त  
 एकमेवात्तरं नाऽशक्नुवन्पील्यितुमोमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ  
 ह वाव सरसः । सरसा ह वा एवंविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥  
 स यां ह वै ऋष्या विद्यया सरसया जितिं जयति यामृद्धिमृध्नोति  
 जयति तां जितिमृध्नोति तामृद्धिं य एवं वेद ॥५॥ एतद्ध वा  
 अत्तरं ऋष्यै विद्यायै प्रतिष्ठा<sup>४</sup> । ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-  
 ध्वयुरोमित्युद्गाता ॥६॥ एतद्ध वा अत्तरं वेदानां त्रिविष्टमम् ।  
 एतस्मिन्वा अत्तरं ऋत्विजो यजमानमाधाय स्वर्गे लोके समुदहन्ति  
 तस्मादोमित्येवानुमन्त्रयेत् ॥७॥ १-६॥

चतुर्थोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

०:

गुहासि देवोऽस्युपवा स्युप तं वायस्व योऽस्मान्द्वेष्टि यं चवयं  
 द्विष्टमः ॥१॥ माहिनासि बहुलासि बृहत्यसि रोहिण्यस्यपन्नाऽसि ॥२॥

१ य । २-अ । ३ विभ- । ४ त्रैय- । ५ प्रतिष्ठे । ६-ए ।

१ देवास्मि । २ प्य । ३ वैयस्वि । ४ महिका ।



सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
 भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते  
 ता दिशामि ॥४॥ नाम मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि  
 तन्मे मोऽपहृथा इतीमाम्पृथिवीमवोचत् ॥५॥ तमियमागतम्पृथिवी  
 प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥  
 यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति ।  
 नाम मे शरीरम्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति ।  
 तदस्मा इयम्पृथिवी पुनर्ददाति ॥८॥ तामाह प्र मा वहेति ।  
 किमभीति । अग्निमिति तमग्निमभिप्रवहति ॥९॥ सोऽग्निमाहा-  
 ऽभिजिदस्यभिजय्यासम्<sup>१०</sup> । लोकजिदसि लोकं जय्यासम् ।  
 अक्षिरस्यभ्रमघ्रासम् । अक्षादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥१०॥  
 सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
 भूयासम् ॥११॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।  
 उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽभ्रम्मे वाङ् मे । तन्मे  
 त्वयि । तन्मे मोऽपहृथा इत्यग्निमवोचत् ॥१३॥ तं तथैवाऽऽगत-

५ आभूरिति । ६ स । ७ मधी । ८ म । ९-हन्ति ।  
 १० 'अभिजिदस्य' दो शार आया है । ११ जघ्यं- । १२-थाङ् ।  
 १३ तस्मा । १४ अस्माय ॥

मग्निः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥  
 यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं नु ते  
 मयीति । तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाह् मे । तन्मे त्वयि । तन्मे  
 पुनर्देहीति । [तद्] अस्मा<sup>१२</sup> अग्निर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तमाह प्र मा  
 चहेति ॥१७॥३॥२०॥

पञ्चमऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

किमभीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायु-  
 माह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यदक्षिणतो वासीशानो  
 भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो  
 वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्ठादववासि प्रजापतिर्भूतो-  
 ऽववासि ॥२॥ त्रासो<sup>२</sup>ऽस्येकत्रासोऽनवसृष्टो<sup>३</sup> देवानाम्बिलमप्यथा ॥३॥  
 तव प्रजास्तवौषधयस्तवाऽऽपो विचलितमनुविचलन्ति ॥४॥ सम्भू-  
 र्देवो<sup>५</sup>ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
 भूयासम् ॥५॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टानाऽहं तव ताः पर्येमि । उप  
 ते ता दिशामि ॥६॥ प्राणापाणौ मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे  
 मोऽपहृथा इति वायुमवोचत् ॥७॥ तं तथैवागतं वायुः प्रतिनन्दत्ययं  
 ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी-

साह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥८॥ किं नु ते मयीति । प्राणापानौ  
मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुन-  
र्ददाति ॥९०॥ तमाह प्र मा वहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोक-  
मिति । तमन्तरिक्षलोकमभिप्रवहति ॥९१॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष  
लोकः प्रति नन्दस्यं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक  
इति ॥९२॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥९३॥ किं  
नु ते मयीति । अयम् आकाशः स मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति ।  
तस्मात् आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्ददाति ॥९४॥ तमाह प्र मा  
वहेति ॥९५॥ ३॥२१॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

किमभीति । दिश इति । तं दिशोऽभिप्रवहति ॥१॥ तं तथै-  
वागतं दिशः प्रतिनन्दस्यं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक  
इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्विसाह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं  
नु तेऽस्मास्विति । श्रोत्रमिति । तदस्मै श्रोत्रं दिशः पुनर्ददति ॥४॥  
सा आह प्र मा वहेति । किमभीति । अहोरात्रयोर्लोकमिति ।  
तमहोरात्रयोर्लोकमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमहोरात्रे प्रति-  
नन्दतोऽयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव

से युवयोरित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु त आकयोरिति ।  
अक्षितिरिति । तामस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते आह  
प्र मा वहतमिति ॥६॥३२२॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिप्रवहतः ॥१॥  
तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह  
नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्ते-  
ति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि क्षुद्राणि पर्वणि । तानि  
मे युष्मासु । तानि मे प्रति संघत्तेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः  
प्रति संदधति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासा-  
निति । तस्मासानभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमर्धमासाः  
प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥  
यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मा-  
स्विति । इमानि स्थूलानि पर्वणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे  
प्रति संघत्तेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधति ॥८॥  
तानाह प्र मा वहतेति ॥६॥३२३॥

पञ्चमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

किमभीति । ऋतुनिति । तमृतूनभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं  
 तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं  
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति  
 ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे  
 युष्मासु तानि मे प्रतिसंधत्तेति । तान्यस्यर्तवः पुनः प्रतिसंधति  
 ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं  
 संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्द-  
 त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे  
 त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयम्म  
 आत्मा । स मे त्वाये तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आत्मानं  
 संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तमाह प्र मा वहति ॥६॥ ३।२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभि-  
 प्रवहति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते  
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मा-  
 स्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।

१ ते । २ त्वयी । ३ वहते ॥

१३।

गन्धो<sup>२</sup> मे मोदो मे प्रमोदो मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति  
 तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति ।  
 किमभीति । अप्सरस इति । तमपसरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं  
 तथैवाऽऽगतमप्सरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं  
 लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति  
 ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळा मे मियुनम्मे । तन्मे  
 युष्यासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अप्सरसः पुनर्ददति ॥८॥  
 ता आह प्र मा वहतेति ॥९॥३।२५॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः खण्ड ।

किमभीति । दिवामिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं  
 तथैवाऽऽगतं द्यौः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं  
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥  
 किं नु ते मयीति । तृप्तिरिति । सकृत्तृप्तेव शेषा । तामस्मै तृप्तिः  
 द्यौः पुनर्ददाति ॥४॥ तमाह प्र मा वहतेति । किमभीति । देवानिति ।  
 तं देवानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते  
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वि-

साह तद्वाव मे पुनर्ददोति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । अमृतमिति ।  
तदस्मा अमृतं देवाः पुनर्ददति ॥८॥ तानाह प्र मा वहतेति ॥९॥ ३॥२॥

पञ्चमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिप्रवहन्ति । ॥१॥ स  
आदित्यमाह विभूः पुरस्तात्सम्पत् पश्चात् । सम्यङ् त्वमसि ।  
समीचो मनुष्यानरोषी रूषतस्त ऋषिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-  
पाप्मा भवति यस्त्वैव वेद ॥२॥ सम्भूदेवोऽसि सप्तहम्भूयासम् ।  
आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा  
उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येभि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ ओजो  
मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इत्यादित्यमवोचत् ॥५॥  
तं तथैवाऽऽगतमादित्यः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह  
नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वमीसाह तद्वाव मे पुनर्देही  
ति ॥७॥ किं नु ते मयीति । ओजो मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्  
त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा आदित्यः पुनर्ददति ॥८॥  
तमाह प्र मा वहतेति । किमभीति । चन्द्रमसमिति । तं चन्द्रमसमभि

२-दाति ॥

१-वत् । २-सम्यङ् । ३-अस्तेतिषि 'ति' लाल से कटा हुआ है । ४-त्व । ५-एवम् । ६-भूतिर् । ७-भूतिर् । ८-ऽऽगता । ९-नास्ति  
१०-त्वयी, त्वी यीति । ११-चन्द्र-

प्रवहति ॥६॥ स चन्द्रमसमाह सखस्य पन्था न त्वा जहाति ।  
<sup>१४</sup>अमृतस्य पन्था न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-  
मानो भरो नाम ब्राह्मण उपास्से । तस्मात्ते सखा उभये देवमनुष्या  
अन्नाद्यम्भरन्ति । अन्नादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥११॥ सम्भूर्देवो-  
ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि  
भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।  
उप ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-  
<sup>१५ १६</sup>तिर्मे तन्मे त्वयिस्तन्मे मोऽपहृथा इति चन्द्रमसमवोचत् ॥१४॥ तं  
तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । सह नावयं  
लोक इति ॥१५॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१६॥  
किं नु ते मयीति । मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे । तन्मे  
त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददति ॥१७॥  
तमाह प्र मा वहेति ॥१८॥ ३।२७॥

पञ्चमेऽनुवाके ऽष्टमः खण्डः ।

किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति । तमादिसमाभिप्रवहति ॥१॥

स आदिसमाह प्र मा वहेति । किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति ।

११ चन्द्र- १२ वा । १३-आस । १४ नास्ति; अमृतस्य पराध

.....देवोऽसि समहम् । १५-ति । १६ मे, म । १७ किं नु ॥

१ प्रथमो । २ ब्राह्म-



तं चन्द्रमसमभिप्रवहति<sup>१</sup> । स एवमेते देवते अनुसंचरति<sup>२</sup> ॥३॥  
 एषोऽन्तोऽतः परः प्रवाहो नास्ति<sup>३</sup> । यानु काँश्चाऽतः प्राचो लोका-  
 नभ्यवादिष्म<sup>४</sup> ते सर्वे<sup>५</sup> आप्ता भवन्ति ते जितास्तेष्वस्य सर्वेषु काम-  
 चारो भवति य एवं वेद ॥३॥ स यदि कामयेत पुनरिहाऽऽजाये-  
 येति यस्मिन् कुलेऽभिध्यायेद्यदि ब्राह्मणकुले यदि राजकुले  
 तस्मिन्नाजायते । स एतमेव लोकम्पुनः प्रजानन्नभ्यारोहन्नेति ॥४॥  
 तदु होवाच शाक्यायनिर्बहुव्याहितो वा अयम्बहुशो लोकः । एतस्य  
 वै कामाय नु<sup>६</sup> ब्रुवते [वा] श्राम्यन्ति<sup>७</sup> वा क एतत्प्रास्य पुनरिहेया-  
 दत्रैव स्यादिति ॥५॥३१२८॥

पञ्चमेऽनुवाके नवमः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

उच्चैश्श्रवा<sup>१</sup> ह कौपयेयः<sup>२</sup> कौरव्यो राजाऽऽस । तस्य ह केशी<sup>३</sup>  
 दार्भ्यः पाञ्चालो राजा स्वस्तीय<sup>४</sup> आस । तौ हाऽन्योन्यस्य मिया-  
 वासतुः ॥१॥ स होच्चैश्श्रवाः<sup>५</sup> कौपयेयोऽस्माल्लोकात् प्रेयाय ।  
 तस्मिन् ह प्रेते केशी<sup>६</sup> दार्भ्योऽरण्ये मृगयां च चाराऽपियं विनिनी-

३-अन्ति । ४ 'एषोत्यमभिप्रवहति । प्र मा वहेऽति । किमभीऽति ।  
 ब्राह्मणं लोकमिति.....देवते अनु संचरति' अधिक है । ५ इस्मि ।

६-दिष्ट । ७ तेषु । ८ 'वा' अधिक है । ९ श्रूवते । १० 'चा' अधिक है ।

१-ऐश्र- । २ कौव- । ३ केदशी, केदश । ४ स्वस्ती- । ५ 'गा' लाज रङ्ग  
 में कटा हुआ अधिक है । ०

षमाणाः ॥२॥ स ह तथैव पत्ययमानो मृगान् प्रसरन्नन्तरेणै-  
 वोच्चैश्श्रवसं कौपयेयमधिजगाम ॥३॥ तं होवाच दृष्यामि स्त्री-  
 ज्ञानामीति । न दृष्यसीति होवाच जानासि । स एवास्मि यस्मा  
 मन्यस इति ॥४॥ अथ यद्भगव आहुरिति होवाच य आविर्भव-  
 त्यन्येऽस्य लोकमुपयन्तीत्यथ कथमशको म आविर्भवितुमिति ॥५॥  
 ओमिति होवाच यदा वै तस्य लोकस्य गोप्तारमविदेऽतस्त आवि-  
 रभूवमप्रियं चास्य विनेष्याम्यनु चैनं शासिष्यामीति ॥६॥ तथा  
 भगव इति होवाच । तं वै नुत्वा परिष्वजा इति । तं ह स्म  
 परिष्वजमानो यथा धूमं वापीयाद्वायुं वाकाशं वाग्न्यर्चिं वाऽपोवैवं  
 ह स्मैनं व्येति । न ह स्मैनम्परिष्वङ्गायोपलभते ॥७॥ ३।२६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच यद्वै ते पुरा रूपमासीत्तत्ते रूपम् । न तु त्वा परि-  
 ष्वङ्गायोपलभ इति ॥१॥ ओमिति होवाच ब्राह्मणो वै मे साम  
 विद्वान् साम्नोद्गायत् । स मेऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत् ।  
 तद्यस्य वै किल साम विद्वान् साम्नोद्गायति देवतानामेव सलोकतां  
 गमयतीति ॥२॥ पतङ्गः प्राजापत्य इति होवाच प्राजापतेः प्रियः

६ प्रस्सर- । ७ ऽर्च्यैश्च- , ऽर्च्यैश्च- । ८ य । ९ अत । १० वा ।  
 ११ हे । १२ वै ॥

१ ऽव । २ ने । ३-गोयो । ४ ऽप लभते । ५-रारण्य ।

पुत्र आस । स तस्मा एतत् सामाब्रवीत् । तेन स ऋषीणामुद-  
 गायत् । त एत ऋषयो धूतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव  
 साम्नेति होवाच प्रजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा  
 धूतशरीरा इति । ४॥ तस्मिन् हैनमनुशशास । तं हानुशिष्यो-  
 वाच यस्मैवैतत् साम विद्यात् स स्मैव त उद्गायत्विति ॥५॥ स  
 हानुशिष्ट आजगाम । स ह स्म कुरूपञ्चालानाम्ब्राह्मणानुप-  
 ष्टमानश्चरति ॥६॥३॥३०॥

षष्ठोऽनुवाके द्वितीयः अण्डः ।

व्यूढञ्छन्दसा वै द्वादशाहेन यच्च्यमाणोऽस्मि । स यो  
 वस्तत्साम वेदं यदहं वेदं स एव म उद्गास्यति । मीमांसध्वमिति  
 ॥१॥ तस्मै ह मीमांसमानानामेकश्चन [ न ] सम्प्रत्यभिदधाति  
 ॥२॥ स ह तथैव पत्ययमानश्चमशाने वा वने वाऽऽवृत्तीशिया-  
 नमुपाधावर्थाचकार । तं ह चायमानः प्रजर्ही ॥३॥ तं हौ-  
 धाच कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि प्रातृदो भाल्ल इति ॥४॥ स किं  
 वेत्थेति । सामेति ॥५॥ ओमिति होवाच । व्यूढञ्छन्दसा वै  
 द्वादशाहेन यच्च्यमाणोऽस्मि । स यदि तत्साम वेत्थ यदहं वेदं त्व-

६ ध्या । ७ तं । ८ वे । ९-द्या । १०-पाञ्जे-ति

१-चप-न । २ यदिति । इत्त्वम् । ४ वेत्थ । ५ इमश्च नाम । ६ वाचःसाध । ७ न ।  
 ८ उव, उप । ९ च्छायान, जायान । १०-चप-न । ११ 'यदहं वेत्थ' अधिक है ।

मेव म उद्गास्यासि । मीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह मीमांसमानस्त-  
 देव<sup>१३</sup> सम्प्रत्यभिदधौ ॥७॥ तं होवाचाऽयम्म उद्गास्यतीति<sup>१४</sup> ॥८॥  
 तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा असूयन्त आहुरेषु ह वा अयं  
 कुल्येषु<sup>१७</sup> सत्सुद्गास्यति<sup>१८</sup> । कस्मा अयमलमिति ॥ ६ ॥ अलम् न्वै  
 मह्यमिति हस्माऽह । सैवाऽलम्मस्याऽलम् मतायैद्वतस्य हाऽल-  
 मैवोज्जगौ । तस्मादालम्भैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥३॥३१॥

षष्टेऽनुषाके तृतीयः खण्डः ।

तद् सात्यकीर्ता आहुय्यां वयं देवतामुपास्महे एकमेव वयं तस्यै  
 देवतायै रूपं गव्यादिशाम एकं वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं  
 सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव  
 रूपम्राण एव । यावद्धचेव प्राणेन प्राणिति तावद्रूपमभवति तद्-  
 पमभवति ॥२॥ तदथ यदा प्राण उत्क्रामति दावेवेव भूतोऽनर्थ्यः  
 परिशिष्यते न किञ्चन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तपः । तस्मा-  
 त्तप्यमानस्योष्णतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्माग्निः ।  
 स निरुक्तः । तत्मात्स दहति ॥५॥ अथाधिदेवतम् । इयमेवैषा

१२-ति से ठीक किया हुआ । १३ 'स' अधिक है । १४ नास्ति 'इति' ।  
 १५-पान्च- । १६-आसू- । १७-कुल्येषु । १८-गास- । १९-अर्गम् । २०-न्यै  
 इसके आगे 'म' लाल रंग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२-एवौ ॥

१-यव । २-एयो । ३-ए । ४-मः । ५-इति । ६-देव- । ७-ए- ।

गोऽयम्पवते । तस्मिन्नेतस्मिन्नापोऽन्तः । तदन्नम् । सो-  
 पासितव्यः । यदस्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरुक्तः ॥६॥ तस्या-  
 तपस् । तस्मादेष आतपत्युष्णतरः पवते ॥७॥ तपसो-  
 ॥ विद्युत् । स निरुक्तः । तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि  
 ने चत्वारि साम प्राणो वाङ्मनस्स्वरः । स एष प्राणो  
 तोति मनो नेत्रः । तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्  
 एवं वेद ॥९॥३॥३२॥

षष्ठेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

गो वायुः प्राण एव सः । योऽग्निर्वागिव सा । यश्चन्द्रमा-  
 १  
 इत् । य आदित्यस्स्वर एव सः । तस्मादेतमादित्यमाहु-  
 २  
 त्ति ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूरधि-  
 ३  
 ॥ वा एता दुरनुसम्प्राप्या इव । कस्तद्वेद्ययेता अनु-  
 नुयान्न वा ॥२॥ अथ य एता अध्यात्ममुपास्ते स हा-  
 ४  
 भवति । निर्जीर्यन्तीव वा इत एता । [ त् ] अस्य वा  
 ५  
 स्य सह प्राणो न निर्जीर्यन्ति । क उ एव तद्वेद यद्येता  
 ६  
 म्प्राप्नुयान्न वा ॥३॥ अथ य एता उभयीरेकधा भव-  
 ने वासितव्यो ( १ ) यदस्मिन्नापोऽन्तस्-तस्मात्सोऽपि  
 रा आया है ॥  
 १। २-रुद्धे । ३-आपा । ४ चा । ५ वै । ६ उभेधीर् ।

न्तीवेद स एवानुष्टुया साम वेद स आत्मानं वेद स ब्रह्मवेद ॥४॥  
 तदाहुः प्रादेशमात्राद्वा इत एता एकम्भवन्ति । अतो ह्ययम्प्राण-  
 स्स्वर्यं उपर्युपरि वर्तन इति ॥५॥ अथ हेक आहुश्चतुरंगुलाद्वा इत  
 एता एकम्भवन्तीति । अतो ह्येवायम्प्राणस्स्वर्यं उपर्युपरि  
 वर्तत इति ॥६॥ स एष ब्राह्मण आवर्तः । स य एवमेतम्ब्रह्मण  
 आवर्तं वेदाऽभ्येनम्प्रजाः पशव आवर्तन्ते सर्वमायुरेति ॥७॥ स  
 यो हैवं विद्वान्प्राणेन प्राणयाऽपानेनाऽपान्य मनसैता उभयोर्दे-  
 वता आत्मन्येत्य मुख आधत्ते तस्य सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितम् ।  
 न हास्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥८॥३३३॥

षष्ठेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

तदेतन्मिथुनं यद्वाक्च प्राणश्च । मिथुनमृक्सामे । आचतुरं  
 वाव मिथुनम्प्रजननम् ॥१॥ तद्यत्राऽद् आह सोमः पवत इति  
 वौषावर्तध्वमिति वा तत्सहैव वाचा मनसा प्राणेन स्वरेण हिङ्-  
 कुर्वन्ति । तद् हिङ्कारेण मिथुनं क्रियते ॥२॥ सहैव वाचा मनसा  
 प्राणेन स्वरेण निधनमुपयन्ति । तन्निधनेन मिथुनं क्रियते ॥३॥  
 तत्सप्तविधं साम्नः । सप्तकृत्व उद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं च  
 शरीरात्प्रजनयति ॥४॥ यादृशस्यो ह वै रेतो भवति तादृशं

७-अ । ८ स्वय्य । ९-रि (!) । १०-त्त इद् । ११ ब्रह्मण ॥

१ पाप । २-कार । ३-आ ।

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुरुष एव यदि गोगौरेव यद्यश्वस्याश्व  
 एव यदि मृगस्य मृगएव । यस्यैव रेतो भवति तदेव सम्भवति ॥५॥  
 तद्यथा ह वै सुवर्णं हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं कल्याणतरं कल्याण-  
 तरम्भवति एवमेव कल्याणतरेणा कल्याणतरेणात्मना सम्भवति  
 य एवं वेद ॥६॥ तदेतदृचाभ्यनूच्यते ॥७॥३॥४॥

षष्ठेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा  
 विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीची-  
 नाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । प्राणो  
 वै पतङ्गः । पतन्निव हेष्वङ्गेष्वति रथमुदीक्षते । पतङ्ग इत्याचक्षते  
 ॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरम् । तद्वचसुषु रमते ।  
 तस्यैव माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति ।  
 हृदैव होते पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो  
 विचक्षते इति । पुरुषो वै समुद्र एवंविद् उ कवयः । त इमाम्पु-  
 रुषेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ।  
 मरीच्य इव वा एता देवता यदाग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥६॥ न ह

४ अच्यया । ५-स्या-॥

१ अक्षम् । २-ताः । ३-ए । ४ त । ५ हृद् । ६ एवं । ७ स ।

वा एतासां देवतानाम्पदमस्ति । पदेनो ह वै पुनर्मृत्युरन्वेति ॥७॥  
 तदेतदनन्वितं साम पुनर्मृत्युना । अति पुनर्मृत्युं तरति य एवं  
 वेद ॥८॥३।३५॥

षष्ठेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।  
 तां द्योतमानां स्वर्यम्मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति  
 इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्तीति । प्राणो वै पतङ्गः । स  
 इमां वाचम्मनसा विभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तरिति ।  
 प्राणो वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्तर्वाचं वदति ॥३॥  
 तां द्योतमानां स्वर्यम्मनीषामिति । स्वर्या ह्येषा मनीषा यद्वाक् ॥४॥  
 ऋतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा ऋतमेवंविद उ कवयः ।  
 ओमित्येतदेवाक्षरमृतम् । तेन यहचम्मीमांसन्ते यद्यजुर्यत्साम  
 तदेनां निपान्ति ॥५॥३।३६॥

षष्ठेऽनुवाकेऽष्टमः खण्डः ।

८ वे ।

१-ओ । २-आ । ३ वदति । ४ अन्त- । ५-अ । ६ 'यत्साम'  
 के आगे 'ओमित्ये-ऋतम्' है ॥



अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तरम् ।

स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान आ वरीवर्त्ति भुवनेश्वन्तर इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमिति । प्राणो वै गोपाः । स हीदं सर्व  
निपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तर्भिति  
तद्ये च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा  
परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान इति  
सध्रीचीश्च ह्येष एतद्विषूचीश्च प्रजा वस्ते ॥४॥ आ वरीवर्त्ति भुव  
श्वन्तरिति । एष ह्येषु भुवनेश्वन्तरावरीवर्त्ति ॥५॥ स एष  
उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गतुश्चोपगातृ  
च विज्ञायते । इत एवोर्ध्वस्वरुदेति । स उपरि मूर्ध्नो लेलायति ॥  
स विद्यादागमदिन्द्रो नेह कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशेक्ष्यत इति  
तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशिष्यते ॥७॥ तदे  
भ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते  
यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव [न] कंचन भ्रातृ  
म्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥८॥ ३।३७  
षष्ठेऽनुवाके नवमः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१-रीच्-इस पाद के प्रारम्भ में 'अति' ऐसा अधिक है । २-  
३-तृण-। ४-ध्व । ५ आगाद् । ६ परिषे-। ७ पत । ८ अ-॥

प्रजापतिम्ब्रह्माऽऽसृजत् । तमपश्यममुखमसृजत् ॥१॥ तमप्र-  
 पश्यममुखं शयानम्ब्रह्माऽऽविशत् । पुरुष्यं तत् । प्राणौ वै ब्रह्म ।  
 प्राणो वावैनं तदाविशत् ॥२॥ स उदतिष्ठत् प्रजानां जनयिता ।  
 तं रक्षांस्यन्वसचन्त् ॥३॥ तमेतदेव साम गायन्नत्रायत् । यद्गायन्न-  
 त्रायत् तद्गायत्रस्य गायत्रत्वम् ॥४॥ त्रायत् एनं सर्वस्यांस्पाप्मन्तो  
 मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्यृचाऽऽश्रव-  
 णीयेनोपागायन् ॥६॥ यदुपाऽस्मै गायता नर इति तेन गायत्रम-  
 भवत् । तस्मादेषैव प्रतिपत्कार्या ॥७॥ पवमानायेन्दावा अभि-  
 देवमिया-हुम्-भाक्षाता इति षोडशाक्षराण्यभ्यगायन्त् । षोडशकलं  
 वै ब्रह्म । कलाश एवैनं तद्ब्रह्माऽऽविशत् ॥८॥ तदेतच्चतुर्विंशत्क्षरं  
 गायत्रम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः । षोडशाक्षरं गीतं तच्चतुर्विंशतिस्स-  
 म्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यर्धमासस्संवत्सरः । संवत्सरस्साम ॥९॥ ता  
 ऋचश्शरीरेण मृत्युरन्वैतत् । तद्यच्छरीरवत्तन्मृखोराप्तम् । अथ यद्-  
 शरीरं तदमृतम् । तस्याऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत् ॥१०॥  
 ३।३८॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ मुख- । २ अप्रव- । ३-ष- । ४-आस्य- । ५ अनुसच्- । ६ गा-  
 यत्र- । ७ अब्रवीत्- । ८ ऽर्धमा- । ९-साम् । १०-लाम् । ११ प्रास्व- । १२ तम् ।  
 १३-यत् । १४-सास् ॥

ओवाश्चोवाश्चोवाश्च हुम्भा ओवा इति षोडशाक्षरा-  
 रायभ्यगायत । षोडशकलो वै पुरुषः । कलाश एवास्य तच्छरी-  
 रायधूनोव ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा धृतशरीरः । तदेविक्रया-  
 वतियुदासंगायसो इत्युदास । आ इति आवृथाव । वागिति  
 तद्ब्रह्म । तदिदन्तरिचं सोऽयं वायुः पवते । हुमिति चन्द्रमाः ।  
 भा इत्यादिसः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीत्याच-  
 क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भ्रमित्याचक्षते ॥४॥  
 एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमित्याचक्षते ॥५॥ एतस्य  
 ह वा इदमक्षरस्य क्रतोश्शुभ्रमित्याचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा  
 इदमक्षरस्य क्रतोर्वृषभ इत्याचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य  
 क्रतोर्दभ इत्याचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्व्यो-  
 भातीत्याचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भवती-  
 त्याचक्षते ॥१०॥ तद्यत्किं च भाश् इति च भाश् इति च तदेत-  
 न्मिथुनं गायत्रम् । प्र मिथुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥  
 ३।२-६॥

सप्तमेऽनुषाके द्वितीयः खण्डः ।

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन  
 देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतद्ब्रह्म प्रजापतयेऽब्रवीत् प्रजापतिः  
 परमेष्ठिने प्राजापत्याय परमेष्ठी प्राजापत्यो देवाय सवित्रे देवस्सविता-  
 ऽमयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यशृङ्गाय काश्यषाय  
 ऋश्यशृङ्गः काश्यपो देवतरसेश्यावसायनाय काश्यपाय देवतराश्या-  
 वसायनः काश्यपश्शुषाय वाहेयाय काश्यपाय श्रुषो वाहेयः का-  
 श्यप इन्द्रोताय<sup>४</sup> दैवापाय शौनकायेन्द्रोतो दैवापश्शौनको दृतय  
 ऐन्द्रोतये शौनकाय दृतिरैन्द्रोतिश्शौनकः पुलुषाय प्राचीनयोग्याय  
 पुलुषः प्राचीनयोग्यस्सत्यज्ञाय पौलुषये प्राचीनयोग्याय सस-  
 यज्ञः पौलुषिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय सात्यज्ञाय प्राचीन-  
 योग्याय सोमशुष्मस्सात्यज्ञिः प्राचीनयोग्यो हृत्स्वाशयायाऽऽह्न-  
 केयाय<sup>७</sup> माहावृषाय राज्ञे हृत्स्वाशय आह्नकेयो माहावृषो राजा  
 जनश्रुताय<sup>८</sup> कारिद्वयाय जनश्रुतः कारिद्वयस्सायकाय जानश्रुते-  
 याय कारिद्वयाय सायको जानश्रुतेयः कारिद्वयो नगरियो  
 जानश्रुतेयाय कारिद्वयाय नगरी जानश्रुतेयः कारिद्वयश्शङ्गाय<sup>१०</sup>

१ 'काश्यपो' अधिक है । २ श्यावसाय । ३ भूषो, शूषो ।  
 ४, वाखने । ५ इन्द्रात्- । ६-पिश । ७ ल्लोक- । ८ स सात्यायज्ञिः  
 प्राचीनयोग्यो हृत्स्वा' अधिक है । ९ जानश्रु- , जानश्रु- ।  
 १० शिंग- ।

शाठ्यायनय<sup>१</sup> आत्रेयाय शङ्खशाठ्यायनिरात्रेयो रामाय क्रातुजाते-  
याय वैयाघ्रपद्याय रामः क्रातुजातेयो वैयाघ्रपद्यः—॥२॥३॥४०॥

सप्तमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—शङ्खाय बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय<sup>१</sup>  
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारक्ये कँसो वारकिः  
प्रौष्ठपादाय वारक्याय प्रौष्ठपादो वारक्यः<sup>२</sup> कँसाय वारक्याय<sup>३</sup>  
कँसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुबेराय  
वारक्याय कुबेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो  
जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय पाराशर्याय<sup>४</sup>  
सुदत्तः पाराशर्योऽषाढार्योत्तराय पाराशर्याऽषाढ उत्तरः पारा-  
शर्यो विपश्चिते शकुनिमित्राय पाराशर्याय विपश्चित्शकुनिमित्रः  
पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥३॥४१॥

सप्तमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहिसाय श्यामजयन्तो लौहिसः पल्लि-  
गुप्ताय लौहिसाय पल्लिगुप्तो लौहिसस्सत्यश्रवसे लौहिसाय<sup>१</sup> सत्य-

११-नाब ।

१-नाय, कात्याजय-। २ वर-। ३ प-। ४ सुदत्ता, सुदत्ताय ।

५ अष् (।), अष्-॥

६ खोह-।

वा लौहिसः कृष्णधृतये सासकये कृष्णधृतिस्सासकेश्याम-  
 जयन्ताय लौहिषाय श्यामसुजयन्तो लौहिसः कृष्णदत्ताय  
 लौहिषाय कृष्णदत्तो लौहित्यो मित्रभूतये लौहिषाय मित्रभूति  
 लौहिषश्यामजयन्ताय लौहिषाय श्यामजयन्तो लौहित्यस्त्रि-  
 शय कृष्णराताय लौहिषाय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो  
 शस्विने जयन्ताय लौहित्याय यशस्वी जयन्तो लौहित्यो जयकाय  
 लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो  
 लौहित्यो दत्तजयन्ताय लौहित्याय दत्तजयन्तो लौहित्यो  
 पश्रिते दृढजयन्ताय लौहित्याय विपश्रितदृढजयन्तो लौहित्यो  
 लौहित्याय दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्रितो दार्ढ-  
 यन्तिदृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्रिताय दार्ढजयन्तये गुप्ताय  
 लौहित्याय ॥१॥ तदेतदमृतं गायत्रमथ यान्यन्यानि गीतानि  
 म्यान्येव तानि काम्यान्येव तानि ॥२॥३॥४॥॥

सप्तमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

२-ति । ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अधिक है । ४ वैशिप- ।

# [ चतुर्थोऽध्यायः ]

श्वेताश्वो दर्शतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा  
हिंसीः । न मां त्वं वेत्स्य प्रद्रव ॥१॥ यदभ्यवचरणा<sup>१</sup>ऽभ्यवैषि  
स्वपन्तम्पुरुषमकोविदमन्मयेन वर्मणा वरुणा<sup>२</sup>ऽन्तर्दधातु मा ॥२॥  
यदभ्यवचरणा<sup>३</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमको विदमयस्मयेन वर्मणा  
वरुणा<sup>४</sup>ऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणा<sup>५</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पु-  
रुषमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणा<sup>६</sup>ऽन्तर्दधातु मा ॥४॥  
यदभ्यवचरणा<sup>७</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं रजतमयेन वर्मणा  
वरुणा<sup>८</sup>ऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणा<sup>९</sup>ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरु-  
षमकोविदं सुवरीमयेन वर्मणा वरुणा<sup>१०</sup>ऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्माता मतिः पिता नमस्त आविशोषण ।

ग्रहो नामाऽसि विश्वायुस्तस्मै ते विश्वा हा नमो

नमस्ताम्राय नमो वरुणाय नमो जिघांसते ॥७॥ यक्ष्मं राजन्मां मां  
हिंसीः । राजन् यक्ष्म मा हिंसीः । तयोस्संविदानयोस्सर्वमायुर-  
यान्यहम् ॥८॥४॥१॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१-णा । २ इति मन्मयेन । ३ अयाण्य । ४ संक्षेप है  
५ मातन । ६-वाहाय । ७ रुणाय । ८ अं ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य यानि चतुर्विंशतिवर्षाणि तत्प्रात-  
 स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री । गायत्रम्प्रातस्सवनम् ॥२॥  
 तद्ब्रह्मनाम् । प्राणा<sup>२</sup> वै वसवः । प्राणा हीदं सर्वं वस्वाददते ॥३॥  
 स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा<sup>३</sup> वसव इदम्मे  
 प्रातस्सवनं माध्यन्दिनेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो हैव  
 भवति ॥४॥ अथ यानि चतुश्चत्वारिंशत् वर्षाणि तन्माध्यन्दिनं  
 सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभं माध्यन्दिनं  
 सवनम् ॥५॥ तद्ब्रह्मनाम् । प्राणा वै रुद्राः । प्राणा हीदं सर्वं  
 रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत् स  
 ब्रूयात्प्राणा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिनं सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-  
 नुतेति । अगदो हैव भवति ॥७॥ अथ यान्यष्टाचत्वारिंशत्  
 वर्षाणि तत् तृतीयसवनम् । अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागतं  
 तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादित्यानाम् । प्राणा वा आदित्याः ।  
 प्राणा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदु-  
 पद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुधानु-  
 संतनुतेति । अगदो हैव भवति ॥१०॥ एतद् तद्विद्वान् ब्राह्मण



उवाच महिदास ऐतरेय उपतपति किमिदमुपतपसि योऽहमनेनो-  
पतपता न प्रेष्यामीति । स ह षोडशशतं वर्षाणि जिजीव । प्र ह  
षोडशशतं वर्षाणि जीवति नैनम्प्राणस्साम्यायुषो जहाति य एवं  
वेद ॥११॥४२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

त्र्यायुषं कश्यपस्य जमदग्नेस्त्र्यायुषम् ।

त्रीण्यमृतस्य पुष्पाणि त्रीण्यायुषि मेऽकृणोः ॥१॥

स नो मयोभूः पितृवाविशस्व शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥

येऽग्नयः पुरीष्याः प्रिविष्टाः पृथिवीमनु ।

तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३॥४३॥

तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

अरण्यस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरक्ष्णोऽपाभ्पक्वो-  
ऽसि बरुणस्य दूतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यथा त्वममृतोर्मर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-  
ऽस्येवं त्वमस्मानघायुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

५ सम्भ्य ॥

१ त्रियायु- २ त्रीणा । ३ आयुंक्षि । ४-तो । ५ चंतोका  
इ य । ७-भ्यो । ८ प्रा ।

१ विश्वोद्-भ्य । २-क्षमा । ३-दुर्धनाम । ४ त । ५ मर्त्येभ्यो

व्युषि सविता भवस्युदेष्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुष उदितो बृहस्पति-  
 प्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह उग्रो देवो लो-  
 तायन्नस्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अश्वसु सोमो राजा निशाया-  
 तृराजस्वमे मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे  
 भवस्यपररात्रेऽङ्गिरा अभिहोत्रवेलायाम्भृगुः ॥३॥ तस्य तदे-  
 व मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्राक् च प्राणश्च । ताभ्या-  
 बुच्चाऽध्यायम्ब्रह्मर्चयम्प्रजाम्पशून् स्वर्गं लोकं सजातवन-  
 म् ॥४॥ एता आशिष आशासे । भूर्भुवस्वः । उदिते शुक्रमा-  
 । तदात्मन्दधे ॥५॥४५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

भगेरथो हैत्वाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥  
 ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा ऊचुर्भगेरथो ह वा अयमैत्वाको  
 ।। कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः । एतेन कथां वदिष्याम इति ॥२॥  
 हाऽभ्येयुः । तेभ्यो हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीश्चकार ॥३॥ अथ  
 स भाग आवव्राजोपत्वा केशश्मश्रूणि नखान्निकृत्याऽऽज्ये-

१-ओ । २ पराहेण । ३-ज । ४ त । ५-य । ६ आशिष ।  
 ।।दिष ॥

१-पाञ्च- । २ यक्ष्म- । ३ एततेन । ४ 'भा' अधिक है ।  
 ।पत्वा

नाऽभ्यज्य दण्डोपानहम्बिभ्रत् ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा  
 भगवन्तः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत  
 इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुषस्सद्गाता मुहोता  
 स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो  
 वस्तद्वेद यच्छन्दाँसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-  
 सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या  
 उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो  
 वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति ॥९॥१४६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हैनान् पञ्च प्रश्नान् पप्रच्छ ॥१॥ तेषां ह कुरुपञ्च-  
 लानाम्बको दालभ्योऽनूचान् आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-  
 वितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां वै राजन् दिश्या-  
 श्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्राङ्तिष्ठन्नाश्रावयति  
 प्राङ् त्रिष्टन्प्रत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुषस्सद्गाता  
 मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति यो वै मनुष्यस्य  
 सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सद्गाता मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषवि-

१ ज्या ॥

१-पाञ्च- २ अस्म- ३ सम्- ४ प्रच्छ- ।

दाजायत इति प्राणा उ ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति  
 ॥४॥ अथ होवाच यच्छ्रुन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि  
 संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि  
 छ्रुन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा  
 गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वषट्कारेणो ह  
 वाव राजन् गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥  
 अथ होवाच यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति—॥७॥४॥७॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

—यो वै गायत्र्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिगृहीता  
 न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव राजन् गायत्रीमुखम् ।  
 तस्माद्यदग्रावभ्यादधाति भूयानेव स तेन भवति वर्धते । एव-  
 मेवैवं विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिगृह्णन्भूयानेव भवति वर्धत उ एवेति ॥२॥  
 स होवाचाऽनूचानो वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस । त्वामहमनेन  
 यज्ञेनैमीति ॥३॥ तस्य वै ते तथोद्गास्यामीति होवाच यथै-  
 कराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेष्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन गाय-  
 त्रेणोद्गीथेनोज्जगौ । स हैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमियाय ।

४ सम्भूतिदधुर, सम्भूतिर्धर । ५ ह्री ॥

१ अहन्- । २-यन् । ३ गायत्र सौ ।

तेन हैतेनैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकेमेति [य एवं वेद] ॥५॥ ओं  
 वा इति द्वे अक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे ।  
 हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदशोऽस्य भयदस्या-  
 ऽऽसमात्यस्योज्जगौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्याभीति । स  
 होवाच हरीमे देवाश्वा वागायेति । तथेति । तौ हास्मा आजगौ ।  
 तौ हैनमाजग्मतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कामानां सम्पदो  
 वाश्चो वाश्चो वाश्च हुम्भा ओं वागिति । साङ्गो हैव स तनुर-  
 मृतस्सम्भवति य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४॥८॥

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो होद्गीथः । अथैत एव मृत्यवो यद-  
 भिर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाशैर-  
 भिदधति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्च-  
 श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणो-  
 भ्योऽभि मृत्युपाशानुन्मुञ्चतीति ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति  
 य एवास्य वाचि मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ तोन । ५-शे । ६ सचद ॥

१ अथा । २ यजा- ३ उमुन्- ।

विद्वानुद्गायति य एवास्य प्राणो मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति  
 अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्य चक्षुषि मृत्युपा  
 वास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्निधनमुपैति य  
 श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवं वि  
 यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चति ॥८॥ त  
 वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मु  
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृणातीति ॥९॥४।६॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तद्यस्यैवं विद्वान्निहङ्करोति य एवास्य लोमसु मृत्युपा  
 स्मादेवैनं स्पृणाति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य  
 त्वाङ्घ्रि मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥२॥ अथ यस्यैवं वि  
 दिमादत्ते य एवास्य माँसेषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति  
 अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नात्रसु मृत्युपाश  
 स्मादेवैनं स्पृणाति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवा  
 मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुप  
 एवास्यस्थिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥६॥ अथ

४-द्वा । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति

१ क्व-। २ या ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु मृत्युपाशस्स तस्मादेवैनं  
 स्पृणाति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्राता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि-  
 मृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृणाति ॥८॥ तदा-  
 इस्स वा उद्राता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं  
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृत्वा स्वर्गे लोके सप्तथा दधातीति ॥९॥  
 स वा एष इन्द्र वैमृध उच्यन् भवति सवितोदितो मित्रस्संगवकाल<sup>३</sup>  
 इन्द्रो वैकुराठो मध्यान्दिने समावर्तमानश्शर्व उग्रो देवो लोहितायन्  
 प्रजापतिरेव संवेशेऽस्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य  
 एवास्योद्यतस्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं  
 विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति  
 ॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते य एवास्य संगवकाले<sup>३</sup>  
 स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्रायति  
 य एवास्य मध्यान्दिने स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ  
 यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यापराहे स्वर्गो लोकस्तस्मिन्ने-  
 वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य एवास्यास्त-  
 वतस्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्नि-

धनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१७॥

एवं वा एवंविदुद्राता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिष्ठत्युपाशानुन्मु-  
च्याधैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा  
दधाति ॥१८॥४।१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः अण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्तमातः ॥

षड् ढ वै देवतास्स्वयम्भुभोऽधिष्ठातुरसाषादित्यः प्राणोऽन्नं  
वाक् ॥१॥ ताश्चैष्ट्ये व्यवदन्ताऽहं श्रेष्ठाऽस्म्यहं श्रेष्ठाऽस्म्यः [स्मि]  
मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त ।  
ता अनुवन्न वा अन्योन्यस्यै श्रेष्ठतायै तिष्ठामह एता सम्प्रब्रवामहै  
यथा श्रेष्ठास्सम इति ॥३॥ ता अग्निमनुवन्कथं त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥४॥  
सोऽब्रवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो  
हूयन्ते । अहं देवानामन्नं विकरोम्यहम्प्रनुष्याणाम् ॥५॥ स यन्न  
स्याममुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो हूयेरन् ।  
न देवानामन्नं विक्रियेत न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत इदं सर्वम्परा-

६ सप्त ॥

१ षड्ढ । २ ड । ३-घ्रा । ४-ठे । ५ ष्ववद्- । ६ श्रेष्- ।  
७ अन्या- । ८-है । ९ एत । १० त्वा । ११-कार्- । १२ अ ।  
१३ हूयन्ते (!) लिख कर हुयरन् (!) किया गया । १४-ए ।



भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति होचुनैवेह<sup>१८</sup>  
किञ्चन परिशिष्येत यत् त्वं न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमब्रुव-  
न्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह-<sup>१७</sup>  
मन्यासाम्पजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततस्स प्रप्लवते ॥१०॥  
स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येते-  
ति ॥११॥ एवमेवेति होचुनैवेह<sup>१६</sup> किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या  
इति ॥१२॥४११॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीद-  
हमेवोद्यन्नहर्भवाभ्यहमस्तंयनरात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि क्रियन्ते ।  
स यदहं न स्यां नैवाहस्स्यान्न रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥  
तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥३॥  
एवमेवेति होचुनैवेह<sup>३</sup> किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥४॥  
अथ प्राणमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो  
भूत्वाऽभिदीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति । प्राणो  
भूत्वाऽऽदिस उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् ॥६॥ स यदहं न स्यां तत<sup>५</sup>

१६ य ७, १७ अहहम् । १८-ऽव ह ॥

१ ३ उक् । ४ अंक- ५ तत् (१) ।

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति  
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथान्न-  
 मब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाभिर्दी-  
 प्यते । मयि प्रतिष्ठाय वायुराकाशमनुविभवति । मयि प्रतिष्ठाया-  
 दित्य उदेति । मदेव प्राणो मद्वाक् ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत  
 इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति  
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ  
 वाचमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठासीति ॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते  
 मयाऽदः । स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाऽदः ॥१४॥ तत  
 इदं सर्वम्पराभवेत् नैवेह किञ्चन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-  
 ति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥ ४१२॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ता अब्रुवन्नेता वै किल सर्वा देवताः । एकैकामेवानुस्मः ।  
 स यन्नु नस्सर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्तत इदं सर्वम्परा-  
 भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येत । हन्त सार्धं समैस यच्छ्रेष्ठं

इ संक्षेप करते हैं । 'स ( । न के स्थान में ) स्या इति' यद्वां  
 तक छोड़ दिया है । ७ इ-त्य् (।) संक्षिप्त दिया है । ८-शिष्य । ९ तुर ॥

तदस्मादेति ॥१॥ ता एतस्मिन् प्राण<sup>३</sup> ओकारे वाच्यकारे समायन् ।  
 तद्यत्समायन् तत्सान्नस्सामत्वम् ॥२॥ ता अब्रुवन् यानि नो  
 मर्त्सान्यनपहतपाप्मान्यक्षराणि तान्युद्धृत्या<sup>५</sup>मृतेष्व<sup>६</sup>पहतपाप्मसु शुद्धे-  
 ष्वक्षरेषु गायत्रं गायामाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि ।  
 तेनापहस्य<sup>७</sup> मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥३॥ एत्यग्नेर-  
 मृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । गिरित्यस्य मर्त्यमनपहतपाप्मा-  
 ऽक्षरम् ॥४॥ वेति वायोरमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । सुरित्यस्य  
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥५॥ एत्यादित्यस्याऽमृतमपहतपाप्म  
 शुद्धमक्षरम् । त्येत्यस्य<sup>१०</sup> मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥६॥ प्रेति  
 प्राणस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम्<sup>११</sup> । शैत्यस्य<sup>१२</sup> मर्त्यमनपहत  
 पाप्माक्षरम् ॥७॥ एत्यन्नस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । नमित्यस्य  
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥८॥ वेति वाचोऽमृतमपहतपाप्म शुद्ध-  
 मक्षरम् । गित्यस्यै मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥९॥ ता एतानि  
 मर्त्सान्यनपहतपाप्मान्यक्षराण्युद्धृत्याऽमृतेष्व<sup>१३</sup>पहतपाप्मसु शुद्धेष्व-  
 क्षरेषु गायत्रमागायन्नग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि । तेनाप-

३-ए। ४ वाच्य । ५-त्ये । ६ अम-(!) । ७ येन । ८-त ।  
 ९-न । १० त्य इत्य् । ११- वेदिवाचो मृत 'अधिक है पर लाल रङ्ग  
 से छाटा गया है । १२ ग इत्य् । १३-मासु ॥

हृत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-  
मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४॥१३॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ता ब्रह्माऽब्रुवन्त्वयि प्रतिष्ठायैतमुद्यच्छामेति । ता ब्रह्माऽब्रवी-  
दास्येन<sup>१</sup> प्राणेन युष्माना<sup>२</sup>स्येन प्राणेन मामुपासवाथेति ॥१॥  
ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिमेष्यन्त्यो<sup>१०</sup> हिङ्गाराद्रका-  
रमोकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उभाभ्याम्प्राणाभ्यां गायत्रमगायत्रो-  
वा३चोवा३चोवा३च् हुम् भा वो वा इति ॥२॥ स यथोभया-  
पदी प्रतितिष्ठत्येवमेव स्वर्गे लोके प्रत्यतिष्ठन् । प्रति स्वर्गे लोके  
तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य उ ह वा एवं विदस्माह्लोकात्प्रैति स  
प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यभ्राण्यभ्रेभ्योऽधि<sup>४</sup> वृष्टिं  
वृष्ट्यैवेमं लोकमनुविभवति ॥४॥ ऋषयो ह सन्नमासां चक्रिरे ।  
ते पुनः पुनर्बह्वीभिर्बह्वीभिः प्रतिपाद्मिस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं  
नानुचन बुबुधिरे ॥५॥ त ए श्रमेण तपसा व्रतचर्येणोन्द्रमवरु-  
धिरे ॥६॥ तं होचुस्स्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म<sup>६</sup> । ते पुनः पुनर्बह्वीभि-  
र्बह्वीभिः<sup>७</sup> प्रतिपाद्मिस्स्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्समहि<sup>६</sup> ।

१ आस्येनेन । २-आ, -आँन् । ३-अत् । ४ ए- । ५-त्र- । ६ ऐप्सिष्ठु ।  
७ 'बह्वीभिर्' अधिक है । ८ ऽभूत्- । ९० मेवन्त- ।

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति  
संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच  
को वस्स्थविरतम इति ॥८॥४१४॥

अष्टमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अहमित्यगस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै वै<sup>१</sup> तेऽहं  
तद्वक्ष्यामि यदिद्विद्राँसस्वर्गस्य लोकस्य<sup>३</sup> द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति  
संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमेष्यथेति ॥२॥ तस्मा एतं  
गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमुवाचाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणेऽन्ने  
वाचि ॥३॥ ततो वै ते स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्ता-  
स्वस्ति संवत्सरस्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं  
विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्वस्ति संवत्सर-  
स्योद्वचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४१५॥

अष्टमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमिन्द्रोऽगस्त्यायो-  
वाचाऽगस्त्य इषाय इयावाश्वय इषदइयावाश्विर्गौषूक्तये गौषूक्ति-

६ 'अहमित्य' (!) अधिक है ॥

१ नास्ति । २-क्षामि । ३ 'द्वारमेवैवं' अधिक है । ४ वाय् ॥

१-गीत-। २-आवो ।

ज्वालायनाय<sup>३</sup> ज्वालायनदशाध्यायनये<sup>४</sup> शाक्यायनी रामाय कातु-  
नातेयाय<sup>५</sup> वैयाघ्रपद्याय रामः कातुजातेयोवैयाघ्रपद्यः—॥१॥४१६॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

—शङ्खाय<sup>१</sup> बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय  
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारक्याय कँसो वार-  
क्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञदशाण्डिल्योऽग्निदत्ताय शाण्डि-  
ल्यायाऽग्निदत्तदशाण्डिल्यस्सुयज्ञाय शाण्डिल्याय सुयज्ञदशाण्डि-  
ल्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो जनश्रुताय वारक्याय  
जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय<sup>३</sup> पाराशर्याय ॥१॥ सैषा<sup>४</sup> शाक्यायनी  
गायत्रस्योपनिषदेवमुपासितव्या ॥२॥४१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

केनेषितम्यतति प्रेषितम्नः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।  
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुश्श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति ॥१॥  
श्रोत्रस्य श्रोत्रम्नसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः ।  
चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेसाऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३-व्या-। ४-आये । ५-वाक्या-॥

१-आय । २-प-। ३-ओ, और । 'जनश्रुताय वारक्याय  
जनश्रुते (।) वारक्यस्य' अधिक है । ४-ओ ।

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।

न विद्म<sup>१</sup> न विजानीमो<sup>२</sup> यथैतदनुशिष्यात्<sup>३</sup> ॥३॥

अन्यदेव तद् विदितादथो अविदितादधि ।

इति शुश्रुम<sup>४</sup> पूर्वेषां ये मस्तद्भ्याश्चक्षिरे ॥४॥

यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वाग्भ्युद्यते ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥

यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहुर्मनौ<sup>५</sup> मतम् ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि मेदं यदिदमुपासते ॥६॥

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षुषि पश्यति ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥

यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥

यत् प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥४।१८॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्स्य ब्रह्मणो रूपं यदस्य  
त्वं यदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

१ विदु । २-अ- । ३ ऽवै अधिक है । ४-शिष- । ५-भू- ।  
६ मन्यो । ७ मतेम । ८ नश् । ९ उक्तानुक्त है । १०-णीति ॥

नाऽहम्मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमतं तस्य मतम्मतं यस्य न वेद सः ।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्ममतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषुविविच्यधीराः प्रेक्षाऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥५॥४१६

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐक्षन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवाऽयं महिमेति ॥१॥

तद्धैषां विजज्ञौ । तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव । तन्न व्यजानन्त किमिदं

यत्तमिति ॥२॥ तेऽग्निमब्रुवज्जातवेद एतद् विजानीहि किमेतद्

यत्तमिति । तथेति ॥३॥ तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति ।

अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ त्वास्मि-

१ अम-। २-वित्-॥

१-अत । २-म । ३ ऽहम ।



स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदम्पृथिव्यामिति ॥५॥  
 तस्मै तृणं निदधावेतदहेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाकदग्धुम् ।  
 स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥६॥ अथ  
 वायुमब्रुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ॥७॥  
 तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवी-  
 न्मातरिश्वा वा अहमस्मीति ॥८॥ तस्मिँस्त्वयि किं वीर्यमिति ।  
 अपीदं सर्वमाददीय यदिदम्पृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं  
 निदधावेतदादत्स्वेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-  
 ऽऽदातुम् । स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥१०॥  
 अथेन्द्रमब्रुवत् मघवन्नेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ।  
 तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोऽदधे ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे  
 स्त्रियमाजगाम बहु शोभमानामुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्  
 यत्नमिति ॥१२॥४॥२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो  
 हैव विदांचकार ब्रह्मेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

वान्यान् देवान् यदग्निर्वायुरिन्द्रः । ते ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पृथुस्स ह्येनत्<sup>३</sup>  
 प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽतितरामिवा-  
 ज्ञ्यान् देवान् । स ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पर्श स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार  
 ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैष आदेशो यदेतद् विद्युतो<sup>४</sup> व्वद्युतदा<sup>५</sup> इति<sup>६</sup> ।  
 न्यामिषदा<sup>६</sup> ३ । इत्यग्निदेवतम् ॥४॥ अथाऽध्वात्मम् । यदेनद्  
 गच्छतीव च मनोऽनेन चैनदुपस्मरत्यभीक्षणं संकल्पः ॥५॥ तद्ध  
 तद्वनं नाम । तद्वनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं  
 सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ॥६॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति । उक्ता  
 त उपनिषत् । ब्राह्मीं वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो  
 दमः कर्मेति प्रतिष्ठा<sup>३</sup> वेदास्सर्वाङ्गाणि ससमायतनम् ॥८॥  
 यो<sup>१०</sup> वा एतामेवं वेदाऽपहस्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽज्येये  
 प्रतितिष्ठति ॥९॥४।२१।

दशमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१ नेदिष्मा, नेदिष्टम् । २ ते । ३ अन् । ४ विद्यु । ५ इती३ । ६ मीष् ।

७ सुक् । ८ सम्वाञ्छन्ति । ९ ओ । १०-ए ॥

आशा वा इदमग्र आसीद्विविष्यदेव । तदभवत् । ता आपो-  
 ऽभवत् ॥१॥ तास्तपोऽतप्यन्त । तास्तपस्तेषुपाना हुस्सिसेव प्राचीः  
 प्राश्वसन् । स वाव प्राणोऽभवत् ॥२॥ ताः प्राण्याऽपानन् । स  
 वा अपानोऽभवत् ॥३॥ ता अपान्य व्यानम् । स वाव व्यानो-  
 ऽभवत् ॥४॥ ता व्यान्य समानन् । स वाव समानोऽभवत् ॥५॥  
 तास्समान्योदानन् । स वा उदानोऽभवत् ॥६॥ तदिदमेकमेव  
 सधमाद्यमासीद्विविक्तम् ॥७॥ स नामरूपमकुरुत् । तेनैन्द्र्य-  
 विनक् । वि ह पाप्मनो विच्यते य एवं वेद ॥८॥ तदसौ वा  
 आदित्यः प्राणोऽग्निरपानं आपो व्यानो दिशस्समानश्चन्द्रमा  
 उदानः ॥९॥ तद्वा एतदेकमभवत्प्राण एव । स य एवमेतदेकम्भ-  
 वद्वेदैवं हैतदेकधा भवतीत्येकधैव श्रेष्ठस्त्वानाम्भवाति ॥१०॥  
 तदग्निर्वै प्राणो वागिति पृथिवी वायुर्वै प्राणो वागित्यन्तरिक्षमा-  
 दित्यो वै प्राणो वागिति द्यौर्दिस्रो वै प्राणो वागिति श्रोत्रं चन्द्रमा  
 वै प्राणो वागिति मनः पुमान्वा वै प्राणो वागिति स्त्री ॥११॥ तस्येदं  
 सृष्टं शिथिलम्भुवनमासीदपर्याप्तम् ॥१२॥ स मनोरूपमकुरुत् ।

१ 'आशा वा' का पुनः पाठ है । २ वेद । ३ अपान ।  
 ४ प-। ५-मादम् । ६-रैपम् । ७-विनोत् । ८-इम् । ९ उपा-। १० स्त्री-॥

तेन तत्पर्याप्तोत् । दृढं ह वा अस्येदं सृष्टमशियिलम्भुवनम्पर्या-  
प्तम्भवति य एवं वेद ॥१३॥४१२३॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैषा चतुर्धा विहिता श्रीरुद्रीथस्सामाकर्ष्य ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥  
प्राणो वावोद्वाग्गी स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावामो वाक् सा  
तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वागृक् तद्वर्षम् ॥४॥ प्राणो वाव  
ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषदम्भो  
ब्रूहीति । उक्ता त उपनिषदस्य ते धातव उक्ताः । त्रिधातु विष्णु  
वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥ ६ ॥ एतच्चकुक्कं कृष्णं ताभ्रं  
सामवर्णं इति ह स्माह यदैव शुक्लकृष्णो ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति  
स वै ते दृङ्क्ते दशमं मानुषमिति त्रिधातु । स ऐत्तत क नुँ म  
उत्तानाय शयानायिमा देवता बलिं हरेयुरिति ॥७॥४१२३॥

एकादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽष्टणीत ॥१॥ तम्पुरस्तात्प्रसञ्चम्प्रा-

१ उसाश् । २ विहिता । ३ अगीः, गीः । ४ ब्रू । ५-अथ ६-षद् ।  
७-दा । ८ वे । ९-त । १० दशः, श के पूर्व एक अक्षर पढ़ा नहीं  
जाता, कदाचित् कदा है । ११ उक्तानाय ॥

विशत् । तस्मा उरुरभवत् । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अत्रसद  
 एता देवता बलिं हरन्ति ॥३॥ वाचमनुहरन्तीमग्निरस्मै बलिं  
 हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै बलिं हरति ॥५॥ चतुरनु-  
 हरदादियोऽस्मै बलिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहराद्दिशोऽस्मै बलिं  
 हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै बलिं हरति ॥८॥ तस्यैते  
 निष्वाताः<sup>२</sup> पन्था बलिवाहना<sup>३</sup> इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्वाताः  
 पन्था बलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा  
 हैषा ब्रह्मासन्दीमारूढा । आ हास्मै ब्रह्मासन्दीं हरन्त्याधि ह  
 ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयज्ञश्च श्रिया  
 परिवृढम् । ब्रह्म ह तु सन् यज्ञसा श्रिया परिवृढो भवति य एवं  
 वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो<sup>५</sup> योऽयं दक्षिणोऽक्षन्नन्तः । तस्य  
 यच्छुक्लं तदृत्नां रूपं यत्कृष्णं तत्साभ्नां यदेव ताम्रमिव बभ्रुरिव  
 तद्यजुषाम् ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजा-  
 पतिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण  
 भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासि-  
 तव्यम् ॥१३॥१४॥२४॥

एकादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

१ अदिश । २ आ । ३ बलिं वाह् । ४ उप्य । ५ हरति । ६-श । ७ आ । ८-ऊर ।

सच्चाऽसच्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [मनश्च] वाक् च  
 चक्षुश्च श्रोत्रं च श्रोत्रं च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च  
 तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्मं  
 वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य  
 सखमायतनं शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वः प्रैष्यन्  
 पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽ  
 कालात् ॥४॥ अथैषां दशपदी विराट् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्ग-  
 नरकाणि । तान्येनं स्वर्गं गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरकं गतानि  
 नरकं गमयन्ति ॥६॥४२५॥

एकादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

मनो नरको वाङ् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्च श्रोत्रं  
 नरकस्त्वङ् नरको हस्तौ नरको गुदं नरकश्चिश्च नरकः पादौ नरकः  
 ॥१॥ मनसा परीक्ष्याणि वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद  
 ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति  
 वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा संस्पर्शान्वे-  
 देति वेद ॥७॥ हस्ताभ्यां कर्माणि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

ऽशनयां वेदेति वेद ॥६॥ शिश्वेन रामान्वेदेति वेद ॥१०॥  
 पादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य प्रास्त्रवणस्य  
 प्रादेशमात्रादुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते सप्तर्षयस्तद्विवो  
 मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊषास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-  
 तत्कृष्णं चन्द्रमासि तद्विवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते द्यावा-  
 पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद नाऽकामोऽस्माल्लोकात्प्रैति ॥१४॥  
 नमोऽतिसामायैऽतुरेताय<sup>५</sup> धृतराष्ट्राय<sup>६</sup> पार्थुश्रवसाय<sup>६</sup> ये च प्राणं  
 रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वास्ति । कर्मेति गार्हपत्यश्शमं<sup>७</sup> इत्याह-  
 वनीयोदम इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४॥२६॥

एकादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

कस्सविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी  
 सावित्री ॥१॥ स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदाग्निः ।  
 ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥२॥ कस्सविता । का सावित्री ।  
 वरुण एव सविता । आपस्सावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणस्तदापो  
 यत्र वरुणस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [ तदेकम्मिथुनम् ] ॥४॥

२-वद् । ३-कोमो । ४-सामय-सामाय । ५ एतुर् ।

६ पाण्डुश्र-से ठीक किया हुआ है । ७-मय ॥

कस्सविता । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री  
 ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्रायुः । ते द्वे<sup>२</sup>  
 योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥६॥ कस्सविता । का सावित्री । यज्ञ एव  
 सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र  
 वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥८॥  
 कस्सविता । का सावित्री । स्तनयित्नुरेव सविता । विद्युत् सावित्री  
 । ९॥ स यत्र स्तनयित्नुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत् तत्स्तनयित्नुः । ते  
 द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१०॥ कस्सविता । का सावित्री  
 आदित्य एव सविता । द्यौस्सावित्री ॥११॥ स यत्राऽऽदित्यस्तद्द्यौर्यत्र  
 वा द्यौस्तदादित्यः । ते द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१२॥  
 कस्सविता । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री  
 ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः ।  
 ते द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१४॥ कस्सविता । का सावित्री ।  
 मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र  
 [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मिथुनम् ॥१६॥ कस्स-  
 विता । का सावित्री । पुरुष [एव] सविता । स्त्री सावित्री । स  
 यत्र पुरुषस्तत् स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे<sup>२</sup> योनी । तदेकस्मि-  
 थुनम् ॥१७॥ ४१२७॥

द्वादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।



तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । अग्निर्वै  
 वरेण्यम् । आपो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या  
 एष द्वितीयः पादो भर्गमयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै  
 भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः  
 पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री  
 च वै पुरुषश्च<sup>१</sup> प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य  
 धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः  
 ॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री  
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्स्वस्तत् सवितुर्वरेण्यम्भर्गो  
 देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादित<sup>२</sup> । यो वा एतां सावित्री-  
 मेवं वेदाऽप पुनर्भृत्युं तरति सावित्र्या एव सलोकतां जयति  
 सावित्र्या एव सलोकतां जयति ॥६॥४॥२८॥

द्वादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१-सँ । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः'

आधिक्यं करो ॥

## १-ऋषि-नामों की सूची ।

वं० से वंश का अभिप्राय हे ।

अगस्त्य, ४।१५।१॥१६।१॥ वं० ।

अतिसाम एतुरेत, ४।२६।१५॥

अनुवक्ता सात्यकीर्ति, १।५।४॥

अभयद आसमात्य, ४।८।७॥

अभिप्रतारी, ३।१।२।१॥२।२,३,१३॥

अभिप्रतारी काक्षसेनि १।५।६।१॥३।१।२१॥

अयास्य, २।८।७,८॥११।८॥

अयास्य आङ्गिरस, २।७।२,६॥८।३॥

अषाढ उत्तर पाराशर्य ३।४।१।१॥ वं०

आङ्गिरस, २।२।६॥ देखो अयास्य आं० ।

आजकेशी, १।६।३॥

आजद्विश, देखो बम्ब आ० ।

आङ्गार, देखो पार आ० ।

आत्रेय, देखो दत्त कात्यायनि आ०, शङ्क शाब्बासनि आ० ।

आरुणि, १।४।२।१॥

आरुण्येय, २।५।१॥

आर्चाकायण, देखो गळूनस आ० ।

आलुकेय, देखो हृत्स्वाशय आ० ।

आसमात्य, देखो अभयद आ० ।

इन्द्रोत दैवाप शौनक, ३।४।०।१॥ वं० ।

इष इयावाश्वि, ४।१६।१॥ वं० ।

इश्वरभस कौपमेव, ३।२।१।१,२,३॥

उत्तर, देखो आवाह उ० पाराशर्य ।

उमा हैमवती, ४२०।१६॥

उलुक्व (?) जानश्रुतेय, १।६।३॥

उशनः काव्य, २।७।२, ६॥

ऋष्यशृङ्ग काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

एतुरेत (?), देखो अतिसाम प० ।

एक्ष्वाक, देखो भगंरथ प० ।

एक्ष्वाक वाष्पा, १।१।६॥

एतरेय, देखो महिदास ।

एन्द्रोति, देखो वृति प० शौनक ।

कंस वारकी, ३।४।१॥ वं० ।

कंस वारक्य, ३।४।१।१॥ वं० । ४।१०।१॥ वं० ।

कक्षीवन्त, २।३।११॥

कश्यप, ४।३।१॥

कात्तसेनि, देखा अभिप्रतारी का० ।

कायङ्घ्रिय, ३।२०।२॥ देखो जनश्रुत का० । नगरी जानश्रुतेय का० ।

सायक जानश्रुतेय का० ।

कात्यायनि, देखो दत्त का० आत्रेय ।

कापेय, ३।२।२, १२॥ देखो शौनक का० ।

कारीरादि, २।४।४॥

काव्य, देखो उशनः का० ।

काश्यप, ३।४०।२॥ वं० । देखो ऋष्यशृङ्ग का० । देवतरः श्यावसायन

का० । श्रुष वाहेय का० ।

कुबेर वारक्य, ३।४।१॥ वं० ।

कुह, (एकव०) २।५।१।१। (बहुव०) २।३।२।१॥ देखो कौरव ।

कुरूपञ्चालाः, ३।७।६।१।७।३।६, ६।४।६।२।७।३॥

कृष्णादत्त लौहित्य, ३।४।२।१॥ वं० । देखो त्रिवेद क० लौहित्य ।

कृष्णधृति सात्यकि, ३४२१॥ वं० ।

कृष्णरात लौहित्य, ३४२१॥ वं० । देखो त्रिवेद कु० लौहित्य ।

केशी द.भर्य, ३२६१२,२॥

कौपयेय, देखो उच्चैश्रवः ।

क्रातुजातेय, देखो राम क्रा० वैयाघ्रपद्य ।

क्षेमि, देखो सुदक्षिण क्षे० ।

गालूनस आर्क्षिकायणा, १३८४॥

गन्धर्वाप्सरसः, १४११॥४५१०,११॥३५१॥

गुप्त, देखो वंपश्चित दाढेजयन्ति गु० लौहित्य ।

गोबल वार्ष्णी, १६१॥

गोश्रु (जाबाल), ३७७॥

गौतम (आहणि) १४२१॥

गौषुक्ति, ४१६१॥ वं० ।

चैकितानेय, १३७७॥२१२॥ (बहुव०) १४११॥

देखो ब्रह्मदत्त चै० । वासिष्ठ चै० ।

क्षेत्रथि, देखो सत्याधिवाक चै० ।

जनश्रुत काण्डविय, ३४०१॥ वं० ।

जनश्रुत वारक्य, ३४११॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।

जमदग्नि, ३३२१॥४३१॥

जयक लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य ।

जयन्त पाराशर्य, ३४११॥ वं० ।

जयन्त वारक्य, ३४११॥ वं० । (इस नाम के दो व्यक्ति) ४१७१॥ वं० ।

जानश्रुत, देखो नगरी जा० काण्डविय ।

जानश्रुतेय, देखो उलुक्य जा० । सायक जा० काण्डविय ।

जाबाल, ३६६॥ (द्विव०) ३७२,३,५,७,८॥ देखो गोश्रु शुक्र ।

जैयन्ति, १३८४॥

ज्वालायन, ४१६१॥ बं०।

जसदस्यु, २५११॥

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य, ३४२१॥ बं०।

दत्त कात्यायनि आत्रेय, ३४२१॥ बं०।

दत्तजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ बं०।

दार्ढजयन्ति, देखो वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य, वैपश्चित दा०  
दृढजयन्त लौहित्य।

दार्भ्य, देखो केशी दा०।

दालभ्य (ब्रह्मदत्त वैकितानेय), १३८११५६३॥

दालभ्य, देखो बन दा०।

दृढजयन्त, देखो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित दार्ढजयन्त ह०  
लौहित्य।

इति पेन्द्रोति शौनक, ३४०२॥ बं०।

देवतरस इयावसायन काश्यप, ३४०२॥ बं०।

दैवाप, देखो इन्द्रोत दै० शौनक।

धृतराष्ट्र, ४२६१॥

• नगरी जानश्रुतेय काण्डविय, ३४०१॥ बं०।

नाक, ३१३१॥

पतङ्ग प्राजापत्य, ३३०३॥

परमेष्ठी प्राजापत्य, ३४०२॥ बं०।

पल्लिगुप्त लौहित्य, ३४२१॥ बं०।

पाराशर्य, देखो अषाढ उत्तर पा०। जयन्त पा०। वैपश्चित शकुनि-  
मित्र पा०। सुदत्त पा०।

पार्थश्रवस, ४२६१॥

पार्थ शैलन, २४८८॥

पुलुष प्राचीनयोग्य, ३४०२॥ वं०

पृथु वैश्य, ११०॥१॥३४॥४५॥१॥ ;

पौलुषि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य ।

पौलुषित, देखो सत्ययज्ञ पौ० ।

प्रतीदर्श, ४८॥७॥

प्राचीनयोग्य, १३६१॥ देखो पुलुष प्रा० । सत्ययज्ञ पौलुषि प्रा० ।

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्रा० ।

प्राचीनशाल (बहुव०), ३१०१॥

प्राचीनशालि, ३७२, ३, ५, ७॥१०॥१॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा० ।

प्रातृद भाल्ल, ३३१४॥

प्रास्त्रवण, देखो प्लुत्त प्रा० ।

प्रोष्ठपाद वारक्य, ३४११॥ वं० ।

प्लुत्त प्रास्त्रवण, ४२६१२॥

बक दालभ्य, १६३॥४७॥२॥

बम्ब आजद्विष, २७२, ६॥

बाभ्रव्य, देखो शङ्ख बा० ।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय, १३८१॥५६१॥

भगेरथ ऐत्तवाक, ४६१, २॥

भाल्ल, देखो प्रातृद भा० ।

भाल्लविन (बहुव०), २४७॥

मनु, ३१५२॥

महिदास पेतरेय, ४११२१॥

मातरिश्वन्, ४२०८॥

मानथ, देखो शर्यात मा० ।

भिन्नभूति कौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

मुञ्ज सामश्रवस, ३३२॥

यशस्वी जयन्त लौहित्य, ३४२॥१॥ वं० ।

राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य, ३४०॥२॥ वं० । ४१६॥३॥ वं० ।

रौहिण, १२६७, १०॥

लौहित्य, देखो कृष्णादत्त लौ०, कृष्णारात लौ०, जयक लौ०, त्रिवेद  
कृष्णारात लौ०, दत्त जयन्त लौ०, पल्लिगुप्त लौ०, मित्रभूति  
लौ०, यशस्वी जयन्त लौ०, विपश्चित् दृढजयन्त लौ०,  
वैपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौ०, वैपश्चित् दार्ढजयन्ति  
दृढजयन्त लौ०, श्यामजयन्त लौ०, श्यामसुजयन्त लौ०,  
सत्यश्रवस लौ० ।

वासिष्ठ, ३२१३३१५२॥१८६, ७॥ तुल० वासिष्ठ ।

धारकि, देखो कंस वा० ।

वारक्य, देखो कंस वा०, कुवेर वा०, जनश्रुत वा०, जयन्त वा०,  
प्रोष्ठपाद वा० ।

वाष्पा, देखो ऐच्छवाक वा०, गोवल वा० ।

वासिष्ठ चैकितानेय, १४२॥१॥

वाह्येय, देखो श्रुय वा० काश्यप ।

विपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य, ३४२॥१॥ वं० ।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य, ३४१॥१॥ वं० ।

विश्वामित्र, ३३७॥१५१॥ (बहुव०) ३१५॥१॥ तुल० वैश्वामित्र ।

वैकुण्ठ (इन्द्र), ४११॥१०१०॥

वैन्य, १४५॥२॥ देखो पृथु वै० ।

वपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य, ३४२॥१॥ वं० ।

वैपश्चित् दार्ढजयन्ति दृढजन्त लौहित्य, ३४२॥१॥ वं० ।

वैमृथ (इन्द्र), ४१०॥१०॥

वैयाघ्रपद्य, देखो राम क्रातुजातेय वै० ।

शकुनिमित्र, देखो विपश्चित् श० पाराशर्य ।

शङ्ख बाभ्रव्य, ३४११॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।

शङ्ख शाठ्यायनि आत्रेय, ३४०१॥ वं० ।

शर्ध, ४१०१॥

शर्यात मानव, २७१॥८३, ५॥

शाठ्यायनि, १६२॥३०१॥२१॥४३॥६१॥०॥३१३॥६२॥५॥

४१६१॥ वं० । १७१॥ वं० । देखो शङ्ख शा० आत्रेय ।

शाण्डिल्य, देखो सुयज्ञ शा० ।

शालावत्य, १३८५॥

शुक (जाबाल), ३७७॥

शौलन (बहुव०), १२३॥२७६॥ देखो पाष्ण्य शै० सुचित्त शै० ।

शौनक, १५६२॥ देखो इन्द्रोत् द्वैवाप शौ०, इति पन्द्रोति शौ० ।

शौनक कापेय, ३१२१॥

श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३४२१॥ वं० ।

श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

श्यावसायन, देखी देवतरसू श्या० काश्यप ।

श्यावाश्वि, देखो इश श्या० ।

श्रुष बाह्येय काश्यप, ३४०१॥ वं० ।

श्याजनि (एक वैश्य), ३५२॥

सत्ययज्ञ पौलुषित, १३६१॥

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।

सत्यश्रवसू लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

सत्याधिवाक चैत्ररथि, १३६१॥

सात्यकि, देखो कृष्णाधृति सा० ।

सात्यकीर्त (बहुव०), ३३२१॥ देखो अनुवक्ता सा० ।

सात्ययज्ञि (बहुव०), २७५॥ देखो सोमशुभ्र सा० प्राचीनयोग्य ।



सामश्रवस, देखो मुञ्ज सा० ।

सायक जानश्रुतेय कारङ्गविय, ३४०२॥ वं० ।

सुचित्त शैलन, ११४४॥

सुदक्षिण, ३७८॥८॥ ( देखो सुदक्षिण तैमि )

सुदक्षिण तैमि, ३६३॥७१, ४, ५, ६॥ ( देखो सुदक्षिण ) ।

सुदत्त पाराशर्य, ३४११॥ वं०४१७१॥ वं० ।

सुयज्ञ शाण्डिल्य, ४१७१॥

सोमबृहस्पति (द्विव०), १५८॥६॥

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३४०२॥ वं० ।

हृत्स्वाशय आलुकेय, ३४०२॥ वं० ।

हैमवती, देखो उमा है० ।

## २-निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, १२४१॥४३८॥१२४२॥

४३८॥

अन्तरिक्ष, १२०४॥

अयास्य, २८॥७१११८॥

अर्क्य, ४२३४॥

असु, १४०७॥

असुर, ३३५३॥

आङ्गिरस, २१११॥६॥

आदि, ११११॥१६२॥

आदित्य, ४२१॥

आवर्त्त, ३३३७॥

उरस, ४२४२॥

ऋच्, ११५६॥

गायत्र, ३३८४॥

देवश्रुत्, ११४३॥

पतङ्ग, ३३५२॥

पश्यत, १५६६॥

प्रतिहार, ११११॥६॥

प्रसाम, प्रसामि, ११५४॥

प्रस्ताव, १११६॥

बृहस्पति, २२५॥

भीमल, १५७१॥

मधुपुत्र, १५५३॥

महीया, १४८५॥

रुद्र, ४२१॥

रोदसी, १३३४॥

वसु, ४२३॥

वैश्वामित्र, ३३६॥

शतसनि, १५०॥४॥

सजात, १४८॥३॥

समुद्र, १२५॥४॥

सामन्, १३३॥७॥ ४०६॥४८॥७॥ ५१२॥४१३॥२॥ ११२॥५॥ १५३॥५॥

५६१॥४२३॥३॥

सिन्धु, १२६॥२॥

सुवर्ग, ३१३॥४॥

हृदि, १४४॥५॥

### ३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदितिः, १४१॥४॥ ऋ० १८६॥१०॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानाम्, ३३७॥१॥ ऋ० ११६॥४३॥१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ३२१॥४॥ तु० छां० उ० ४३॥७॥

आयुर्माता मतिः पिता, ४१॥७॥

इन्द्रमुक्थमृचम्, १४५॥१॥

इमामेषाम्पृथिवीम्, १३४॥७॥ अथ० १०८॥३६॥

उतैषां ज्येष्ठः, ३१०॥१२॥ अथ० १०८॥२८॥

उपाऽस्मै गायत, ३३८॥६॥ ऋ० ६११॥१॥

ऋषय एते मन्त्रकृतः, १४५॥२॥

चत्वारि वाक् परिमिता, १७३॥४०॥१॥ ऋ० ११६॥४४॥५॥

तत्सवितुर्वरेण्यम्, ४२८॥१॥ ऋ० ३६२॥१०॥

ऽयानुषं कश्यपस्य, ४३१॥१॥ तु० छां० अ० ५१२॥७॥

नवो नवो भवसि, ३२७॥११॥ तु० छां० ऋ० १०८॥४१॥६॥

पतङ्गमक्तम्, ३३५॥१॥ ऋ० १०१॥७७॥१॥

पतङ्गो वाचमनसा, ३३६॥२॥ ऋ० १०१॥७७॥२॥

मयीदं मन्ये भुवनादि, ३१७॥६॥

महात्मनश्चतुरो देवः, ३२१॥१॥ तु० छां० उ० ४३॥६॥

यदृष्यावा इन्द्र ते शतम्, १३२१॥ ऋ० ८।१०।५॥

यस्सत्तरदिमर्षमः, १५२६।७॥ ऋ० २।१२।१२॥

येऽग्नयः पुरीष्याः, ४।३।३॥ य० १८।६।७॥

येभिर्वात इषितः, १।३।४।६॥ अथ० १०।८।३५॥

रूपं-रूपम्प्रतिरूपः, १।४।४।१॥ ऋ० ६।४।७।१८॥

रूपं-रूपम्मघवा, १।४।४।६॥ ऋ० ३।५।३।८॥

स नो मयोभूः, ४।३।२॥

स यदा वै म्रियते, १।४।७॥

स्त्री स्मैवाऽग्ने, १।५।६।५॥

स्थूणां दिवस्तम्मनीम, १।१०।६॥

(स्व)

अभिजिदस्यभिजय्यासम, ३।२०।१०॥

अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), १।५।४।६॥ (संक्षिप्त), ५।७।४॥

अरण्यस्य वत्सोऽसि, ४।४।१॥

उपावर्त्तध्वम, ३।१६।१॥३।४।२॥

गुहासि देवोऽसि, ३।२०।१॥

दिशश्था श्रोत्रम, १।२२।६॥

देवेन संवित्रा, ३।१८।३।६॥

पुरुषः प्रजापतिः, १।४।६।३।४॥

प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, २।२।७॥

महान्महा समधत्त, ३।४।५॥

यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रः, ३।२।१।१॥

विभूः पुरस्तात्सम्पत्, ३।२।७।१॥

म्युषि सविता भवसि, ४।५।१॥

भ्वेताभ्वो दर्शतो, ४।१।१॥

सत्यस्य पन्था, ३।२।७।१०॥

सोमः पवते, ३।१।६।१॥३।३।३॥